शोधादर्श

57

श्री अजित प्रसाद जैन
स्मृति अंक

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

भगवान महावीर स्वामी

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र, श्री महावीर जी

आद्य सम्पादक : (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
पूर्व प्रधान सम्पादक : (स्व.) श्री अजित प्रसाद जैन
सलाहकार : डॉ. शशि कान्त
सम्पादक : श्री रमा कान्त जैन
सह–सम्पादक : श्री नलिन कान्त जैन,
श्री सन्दीप कान्त जैन,
श्री अंशु जैन 'अमर'

प्रकाशक :
तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र.
ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ- २२६ ००४

णाणं णरस्स सारं- सच्चं लोयम्मि सारभूयं

शोधादर्श -५७

वीर निर्वाण संवत् २५३२ नवम्बर २००५ ई.

विषय क्रम

१.	गुरुगुण कीर्तन : श्री अजित प्रसाद जैन	श्री रमा कान्त जैन	१
२.	अग्रज का पत्र अनुज के नाम	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	८
३.	आदरणीय मामाजी	श्री सुरेश चन्द जैन	६
४.	स्मृति के झरोखे से	डॉ. शशि कान्त	१०
५.	हृदय को गहरा आघात	संत ॐ पारदर्शी	१२
६.	भाई अजित प्रसाद	श्री ज्ञानचंद जैन	१३
७.	व्यक्तित्व के प्रतिष्ठापक	डॉ. गणेशदत्त सारस्वत	१७
८.	पूज्य चाचाजी	डॉ. शैलेन्द्र कुमार रस्तोगी	१८
६.	एक अपूरणीय क्षति	पं. नाथूलाल जैन शास्त्री	१६
१०.	वात्सल्य भाव के धनी भाई अजित प्रसाद	श्री सुखमाल चन्द जैन	१६
११.	श्री अजित प्रसाद जैन-एक महामानव	श्री गया प्रसाद तिवारी 'मानस'	२०
१२.	श्री अजित प्रसाद जैन- एक संस्मरण	श्री बी. डी. अग्रवाल	२२
१३.	श्री अजित प्रसाद जी जैन	श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'	२३
१४.	आदर्श सम्पादक : श्री अजित प्रसाद	श्री संजीव 'ललित'	२५
१५.	पुरानी पीढ़ी के ज्योतिपुंज श्री अजित प्रसाद जैन	श्री शिवचरन लाल जैन	२६
१६.	अजित आए और अजित होकर चले गए	डॉ. अभय प्रकाश जैन	३०

१७. एक निष्पक्ष निर्भीक पत्रकार का दुखद निधन — डॉ. राजाराम जैन — ३३
१८. अपराजेय व्यक्तित्व : श्री अजित प्रसाद जी जैन — डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल — ३६
१९. सेतु : स्व. श्री अजित प्रसाद जैन — श्री अंशु जैन 'अंमर — ४१
२०. तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.,
द्वारा २८ जून, २००५ ई. को अभिव्यक्त श्रद्धांजलि — ४६
२१. श्रद्धांजलि — अध्यक्ष, श्री लूणकरण नाहर जैन — ४६
२२. उनका वियोग त्रासदी है — उपाध्यक्ष, श्री कन्हैयालाल जैन — ४७
२३. सामाजिक कार्यों में मेरे प्रेरक — उपाध्यक्ष, श्री नरेश चन्द्र जैन — ४८
२४. **चित्रावली : श्री अजित प्रसाद जैन :**
(१) अपने अग्रज, पिताजी और माताजी के साथ सन् १९३३ ई. में — ४९
(२) अपने अग्रज डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के साथ — ४९
(३) अपनी धर्मपत्नी के साथ १८ जनवरी, १९६२ ई. में — ४९
(४) ३ जून, १९९५ ई. को तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के तत्वावधान में बाल रवीन्द्रालय, लखनऊ में श्रुत पंचमी पर्व पर आयोजित संगोष्ठी को संबोधित करते हुए — ५०
(५) अनन्त-ज्योति विद्यापीठ और ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट के संयुक्त तत्वावधान में ज्योति निकुंज, लखनऊ में इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की १०वीं पुण्य तिथि पर ११ जून, १९९८ ई. को आयोजित सारस्वत समारोह में सभा को सम्बोधित करते हुए — ५०
(६) 'आचार्य विमलसागर (भिण्ड) स्मृति श्रुत संवर्धन पुरस्कार १९९९', दिनांक ८ दिसम्बर, १९९९ ई. को श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा, लखनऊ, के कार्यालय में स्वीकार करते हुए — ५१
(७) २० अप्रैल, २००३ ई. को चिन्माया सभागार, नई दिल्ली में अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा 'प्रेमचन्द जैन पत्रकारिता पुरस्कार, २००२' से सम्मानित किये जाते हुए — ५१
(८) १४ जनवरी, १९७४ ई. को एक पारिवारिक समारोह में स्वजनों के साथ — ५२
(९) ५ अक्टूबर, १९९२ ई. को अपने भ्रातृज डॉ. शशि कान्त और रमा कान्त के साथ — ५२
२५. अन्तिम यात्रा — श्री नलिन कान्त जैन — ५३
२६. अभिन्न मित्र अजित प्रसाद जी — श्री महावीर प्रसाद जैन सर्राफ — ५५
२७. श्रद्धांजलि — जस्टिस एम. एल. जैन — ५६
२८. अपराजेय लेखनी के धनी-श्री अजित प्रसाद जैन — ब्र. संदीप 'सरल' — ५७
२९. मेरे अनन्य श्रद्धापात्र श्री अजित प्रसाद जी — श्री मोतीलाल जैन 'विजय' — ५८
३०. हमारे प्यारे 'टॉफी बाबा' जी — कु. पलक जैन — ५९
३१. कहाँ छिपे हो प्यारे बाबा — श्रीमती इन्दु कान्त जैन — ६०
३२. समाज को जगाने वाला अब नहीं रहा — श्री सन्दीप कान्त जैन — ६१
३३. याद ही रह गई बस — श्री मधुरिम जैन — ६२

३४. वात्सल्य मूर्ति आदरणीय छोटे बाबाजी — श्रीमती निधि जैन — ६३
३५. श्री अजित प्रसाद जैन अष्टक — डॉ. महेन्द्रसागर प्रचंडिया — ६४
३६. अजित प्रसाद जैन ने जग में कीर्ति ध्वजा फहराई — डॉ. महावीर प्रसाद जैन — ६५
३७. पारदर्शी-काव्यांजलि — सन्त ॐ पारदर्शी — ६६
३८. श्रद्धांजलि — डॉ. विमला जैन 'विमल' — ६७
३९. विनयांजलि — श्रीमती शैल बंसल — ६७
४०. **श्रद्धा-सुमन :** — ६८
(१) श्री अखिल बंसल, जयपुर
(२) डॉ. अनंग प्रद्युम्न कुमार, रुद्रपुर
(३) डॉ. अभय प्रकाश जैन, ग्वालियर
(४) श्री आदित्य जैन, कानपुर
(५) डॉ. ऋषभचन्द्र जैन, वैशाली
(६) डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव, लखनऊ
(७) श्री ए. एल. संचेती, जोधपुर
(८) डॉ. कुन्दनलाल जैन, दिल्ली
(९) श्री कुलभूषण कुमार जैन, देवबन्द
(१०) डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी, औरैया
(११) श्री कैलाश मड़वैया, भोपाल
(१२) डॉ. गोकुलचन्द्र जैन एवं डॉ. श्रीमती सुनीता जैन, आरा
(१३) डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा, कोलकाता
(१४) श्री जगाती नर्मदा प्रसाद जैन, सागर
(१५) श्री जमनालाल जैन, सारनाथ
(१६) श्री डालचंद जैन, सागर
(१७) श्री ताराचन्द्र प्रेमी, फिरोजपुर झिरका
(१८) श्री ताराचन्द्र जैन बख्शी, जयपुर
(१९) श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', लखनऊ
(२०) डॉ. नन्दलाल जैन, रीवा
(२१) पं. पद्मचन्द्र शास्त्री, नई दिल्ली
(२२) डॉ. परमानन्द जड़िया, लखनऊ
(२३) डॉ. पूर्णचन्द्र जैन, लखनऊ
(२४) पं. प्रेमचन्द्र जैन 'दिवाकर', डीमापुर
(२५) श्री ब्रह्मराज मित्तल, हांसी
(२६) डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', दमोह
(२७) डॉ. मालती जैन, मैनपुरी
(२८) श्री मिलापचंद डंडिया, जयपुर
(२९) श्री मुकुल मोतीलाल 'विजय' कटनी
(३०) श्री रमेश चन्द्र जैन, फिरोजाबाद

(३१) श्री ललित कुमार नाहटा, नई दिल्ली
(३२) श्री लाल चन्द्र जैन, टिकैतनगर
(३३) प्रा. सौ. लीलावती जैन, पुणे
(३४) श्रीमती विमला मोतीलाल जैन 'विजय', कटनी
(३५) श्री वीरेन्द्र सिंह लोढ़ा, आगरा
(३६) श्री वेद प्रकाश गर्ग, मुजफ्फरनगर
(३७) श्री शान्ति लाल जैन बैनाड़ा, आगरा
(३८) साहु शैलेन्द्र कुमार जैन, खुर्जा
(३९) श्री सनत जैन, रायपुर
(४०) पं. सरमनलाल जैन दिवाकर, सतना
(४१) श्रीमती सितारा जैन, जबलपुर
(४२) पं. सुनील संचय शास्त्री, नरवां (सागर)
(४३) श्री सुबोध कुमार जैन, आरा
(४४) श्री सुभाष जैन, नई दिल्ली
(४५) श्री सुरेश 'सरल', जबलपुर

४१. **चयनिका : श्री अजित प्रसाद जैन की लेखनी से :**
(१) श्राद्ध पर्व- दीपावली ७६
(२) समाज सुधार में धर्मगुरुओं की महत्वपूर्ण भूमिका हो ७८
(३) कुत्ते भौंकते रहे, कारवां चलता गया ८०
(४) मेरी अन्तिम अभिलाषा ८२

४२. **शोधादर्श** में श्री अजित प्रसाद जैन की लेखनी का योगदान ८३

४३. **समन्वय वाणी** में प्रकाशित श्री अजित प्रसाद जैन के सम्पादकीयों की सूची ९२

४४. **साहित्य सत्कार :**
व्यवहारसूक्ति; रोचक हास्य संस्मरण; जय जगत की चर्चा-अर्चा;
सभी धर्म प्रभु के चरण;
The Jaina Sources of the History of Ancient India;
Nandanavana (Elysium);
Chapters on Passions डॉ. शशि कान्त ९४
जीव समास का ज्ञान क्यों आवश्यक है?;
नियमसार स्याद्वाद चन्द्रिका एक अनुशीलन;
नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं; अध्यात्म और प्राण-ऊर्जा;
पं. कस्तूरचन्द्र जैन शास्त्री स्मृति ग्रंथ; खेल-खिलौने श्री रमा कान्त जैन ९७

४५. अभिनन्दन १००
४६. शोक संवेदन १०१
४७. आभार १०१
४८. पाठकों के पत्र १०२

श्री अजित प्रसाद जैन

अगणित स्मृतियां मानस पर छायी हुई हैं
उनमें 'अजित' की ज्योति समायी हुई है
अभिभावक, शिक्षक, मार्गदर्शक, सखा रहे वह मेरे,
उनकी आरती करने थाली सजायी हुई है।।

आज इस स्तम्भ के अन्तर्गत जिन महामना का स्मरण करने जा रहा हूँ वह कोई और नहीं मेरे अपने सगे चाचाजी श्री अजितप्रसाद जी हैं। शैशव में उन्होंने मुझे अपनी गोद में खिलाया था, किशोरावस्था में जब पिताजी प्रवास पर रहते थे उन्होंने अभिभावक, शिक्षक और मार्गदर्शक के कर्त्तव्यों का निर्वहन किया था और अब वृद्धावस्था में उनका सखा भाव मैंने पाया। वह वय में मुझसे १८ वर्ष बड़े थे। वह ८७ पार कर चुके थे और मैं ६६। इस वय में भी युवकोचित उमंग के धनी चाचाजी के रहते हुए मैं उनके सामने अपने को बच्चा ही मानता रहा भले ही औरों की दृष्टि में वृद्ध हो चला था। जीवन का बहुभाग, लगभग ६३ वर्ष, मेरा लखनऊ में ही बीता और इस अवधि में चाचाजी का सतत स्नेहपूर्ण सानिध्य प्राप्त रहा। मैंने उन्हें यहाँ युवा से वृद्ध होते हुए देखा। अपने शैशव से अब तक की लम्बी अवधि के अगणित प्रिय प्रसंग स्मृति-पटल में दबे पड़े हैं। उन सबको ढूंढ कर, झाड़ पोंछकर बाहर निकालना और फिर तरतीब से सजाना सरल नहीं। फिर समय पर उपयुक्त शब्द भी सामने नहीं पड़ते। लेखनी रुक-रुक जाती है।

उनके महाप्रयाण से पूर्व के ६ मासों में उनकी रुग्णावस्था के दौरान कदाचित् ही कोई दिन ऐसा रहा हो जब मैं और भाई साहब डॉ. शशिकान्त जी, अर्थात् हम दोनों, उनसे मिलने उनके आवास न गये हों और उनके साथ दो-तीन घंटे न बिताये हों। वह बड़ी आतुरता से हम दोनों के आने की प्रतीक्षा करते रहते थे। वह हम दोनों से मित्रवत व्यवहार करते थे। विभिन्न विषयों पर चर्चा करते थे और हँसी मजाक करते थे। अपनी गम्भीर बीमारी में भी वह यथाशक्य प्रसन्नचित्त रहने का प्रयास करते थे। काल ने अनेक बार उनके द्वार पर दस्तक दी, किन्तु मृत्युंजयी बन वह उसे अपने पास से भगाते रहे। अनेक व्याधियों से ग्रसित दिन प्रतिदिन शिथिल होती जा रही जर्जर

काया और अतीव दृष्टिमंदता के कारण जब पढ़ना-लिखना तो दूर ठीक से उठना-बैठना भी उन्हें दूभर हो रहा था उन्हें दुनिया जहान की खबरें जानने और सामाजिक गतिविधियों से अवगत होते रहने की ललक बनी रहती थी। वह बड़ी उत्सुकता से उनके बारे में हमसे पूछते थे। आये हुए पत्रों को ध्यान से सुनते थे और उन पर अपना मन्तव्य व्यक्त करते थे। उनकी मनः शान्ति हेतु हम लोग उनके प्रिय धार्मिक पाठों, स्तोत्रों आदि को सुनाते रहते थे। **'भक्तामर स्तोत्र'** और **'बारह भावना'** उन्हें बहुत प्रिय थे।

२२ जून की प्रातः शौचालय जाने हेतु बिस्तर से उठते समय उनका वॉकर असन्तुलित हो गया, गिरकर उनका सिर दीवार के कोने से जा टकराया और रक्त बहने लगा। वह अचेत हो गये। उपचार के लिये उन्हें नर्सिंग होम ले जाया गया। सात टांके लगे। जब हम लोगों को पता चला तुरन्त हम उन्हें देखने गये। वह होश में आ गये थे, बिस्तर पर लेटे हुए थे। घाव की पीड़ा तो थी ही, ठीक़ से बोल पाना भी कठिन हो रहा था, किन्तु मानसिक सन्तुलन बना हुआ था। कुछ देर बाद उन्होंने धीरे से आवाज दी, ''रमाकान्त, इधर आना।'' अपने पास बुलाया और बोले, ''देखो मेरे कागजों में सुरभि (उनकी कनिष्ठ पौत्रवधू) को लिखाया हुआ एक कागज रखा है उसे निकाल लाओ और कागज-कलम लेकर आओ।'' आदेशानुसार उनके कागजों में से ढूंढकर वह कागज मैंने निकाला। उस पर लिखा था 'चमत्कार की जयजयकार'। वह पहले भी दो-तीन बार मुझे बता चुके थे कि इस बार उनकी इच्छा इस विषय पर सम्पादकीय लिखने की है। अतः मैं समझ गया कि वह उनका सम्पादकीय है। उन्होंने कहा, ''पढ़कर सुनाओ।'' मैंने उन्हें पढ़कर सुनाया। उन्होंने बड़े ध्यान से उसे सुना, कुछ संशोधन बताये और फिर मुझे आगे लिखाया और कहा, ''इसे ठीकठाक कर लेना।'' मैंने उसी दिन उनके उस आलेख को साफ किया और इस प्रकार 'शोधादर्श' के लिये उनका अन्तिम सम्पादकीय तैयार हो गया।

२३ जून की प्रातः सूचना मिली कि वह अचेत हो गये हैं। हालत गम्भीर है। हम लोग फौरन पहुँचे। डाक्टर को बुलाया, दिखाया। उसने बताया, ''कॉमा में चले गये हैं। तुरन्त नर्सिंग होम ले जायें।'' वह मधुमेह के रोगी रहे थे। उन्हें तुरन्त एम्बुलेन्स द्वारा अवध नर्सिंग होम, जहाँ वह पहले भी कई बार इन्टेन्सिव केयर यूनिट में भर्ती रहे थे, ले गये। वहाँ उपचार से उन्हें चेत आ गया। ज्ञात हुआ कि उनकी शुगर शून्य हो गई थी। ड्रिप चढ़ रही थी। होश में आते ही कहने लगे, ''मुझे यहाँ

क्यों ले आये? घर ले चलो।" और अगले दिन २४ जून की अपराह्न तक जबर्दस्ती अस्पताल से छुट्टी कराकर अपने घर आ गये।

उसी दिन संध्या समय जब मैं उन्हें घर पर देखने पुनः गया वह आँगन में चारपाई पर चुपचाप अचेत सी अवस्था में लेटे हुए थे। उनकी यह दशा देख मैंने कहा, "चाचाजी, आप अस्पताल से क्यों चले आये?" वह काफी देर तक कुछ बोले नहीं। फिर धीरे से उनके मुख से बोल फूटा, "अरे बेटा, थोड़ा थक गया था। घबराने की कोई बात नहीं है।" फिर बोलने-बतियाने का जो क्रम चला वह लगभग एक घण्टे तक मुझसे प्रेमपूर्वक बतियाते रहे। और अगले दिन २५ जून, २००५ की प्रातः ही उन्होंने हम सबसे मुँह मोड़ लिया।

श्री अजित प्रसाद जी का जन्म १ जनवरी, १६१८ ई. को मेरठ शहर के एक संभ्रान्त धर्मनिष्ठ दिगम्बर जैन गोयल गोत्रीय अग्रवाल परिवार में श्री पारसदास और श्रीमती रामकटोरी की तीसरी व अन्तिम सन्तति के रूप में हुआ था। इतिहास-मनीषी, विद्यावारिधि स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन उनके अग्रज रहे और मैनावती बड़ी बहन। उनकी शिक्षा मेरठ और आगरा में हुई थी। सन् १६३६ ई. में मेरठ कालेज (आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध) से बी.ए. परीक्षा उत्तीर्ण की और संघ लोक सेवा आयोग से चयनित होकर सेना मुख्यालय शिमला चले गये। वहाँ पर सन् १६३६ ई. तक सेवारत रहे। तदनन्तर उ. प्र. लोक सेवा आयोग से चयनित होकर लखनऊ उ.प्र. सचिवालय में कार्य करने लगये और निरन्तर प्रगति करते हुए सन् १६७६ ई. में उप सचिव, उ.प्र. शासन, वित्त एवं सह-वित्तीय सलाहकार, खाद्य एवं रसद विभाग के पद से वह ससम्मान सेवानिवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के उपरान्त भी सन् १६७७ ई. में उन्हें राज्य सरकार द्वारा उ.प्र. संस्कृत अकादमी की स्थापना होने पर उसका मानद कोषाध्यक्ष-सदस्य नियुक्त कर दिया गया।

उ. प्र. सचिवालय में अपने ३७ वर्ष के सेवाकाल में श्री जैन यूं तो विभिन्न महत्वपूर्ण विभागों में महत्वपूर्ण पदों पर आसीन रहे और उनकी छवि एक कर्त्तव्यनिष्ठ, कुशल एवं ईमानदार अधिकारी की रही, किन्तु इस अवधि में उनकी दो विशिष्ट उपलब्धियां रहीं। पहली यह कि सन् १६४७ ई. से १६५० ई. के मध्य राज्य सरकार द्वारा गठित समितियों में क्रमशः सह-सचिव और सचिव के पदों पर कार्यरत रह उन्होंने प्रदेश के चिकित्सा क्षेत्र में देशी चिकित्सा पद्धतियों—आयुर्वेद और यूनानी—के उन्नयन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन समितियों की संस्तुतियों के फलस्वरूप प्रदेश

में स्वतन्त्र आयुर्वेद विभाग और राजकीय आयुर्वेदिक कालेज अस्तित्व में आये। उन्होंने आयुर्वेद विभाग की एक मैनुअल (संहिता) भी तैयार की। प्रदेश में आयुर्वेदिक–यूनानी अकादमी की स्थापना हुई और एक वृहद् आयुर्वेदिक–यूनानी पुस्तकालय का बीजारोपण हुआ।

दूसरी यह कि सन् १९७४ ई. में जब भगवान महावीर स्वामी का २५००वां निर्वाण महोत्सव मनाने हेतु राज्य सरकार द्वारा 'श्री महावीर निर्वाण समिति, उ.प्र.' गठित की गई तब उस समिति में मानद उप सचिव के रूप में समिति का प्रायः सारा कार्यभार (अपने सेवा कार्यों के अतिरिक्त) संभालकर समिति की संस्तुतियों को साकार रूप दिया और प्रदेश भर में समिति द्वारा संस्तुत कार्यक्रमों को अपने मार्गदर्शन में सम्पन्न कराया।

अपने अग्रज डॉ. ज्योति प्रसाद जी के संसर्ग में बाल्यकाल से ही उनमें पढ़ने-लिखने और धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में भाग लेने की अभिरुचि रही। वह जैन कुमार सभा मेरठ के सक्रिय सदस्य रहे और उसकी हस्तलिखित पत्रिका के सम्पादक भी। सन् १९३५ ई. में मेरठ कालेज की वार्षिक पत्रिका में उनका लेख 'कविवर वृन्दावन का काव्य सौष्ठव' प्रकाशित हुआ था। सन् १९३७ ई. में शिमला में वहाँ की जैन सभा के अन्तर्गत एक जैन पुस्तकालय की स्थापना उन्होंने कराई और उसके प्रथम मंत्री बने। लखनऊ आने पर यहाँ चारबाग में जैन मित्र मण्डल की स्थापना कराने वालों में वह रहे। कालान्तर में जैन मिलन स्थापित हो जाने पर वर्षों तक उसकी कार्यकारिणी के सदस्य तथा तदनन्तर उसके संरक्षक भी रहे। जैन शिक्षा संस्थान, लखनऊ के भी वह वर्षों महामंत्री व उपाध्यक्ष रहे। स्थानीय अग्रवाल सभा एवं अग्रवाल शिक्षा संस्था से भी वह लगभग ५० वर्ष तक सक्रिय रूप से जुड़े रहे और उसकी स्वर्ण जयन्ती स्मारिका के प्रधान सम्पादक रहे।

राज्य सरकार द्वारा गठित 'श्री महावीर निर्वाण समिति' का कार्यकाल पूरा हो जाने पर सन् १९७६ ई. में उसकी उत्तराधिकारी संस्था के रूप में "तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र." के गठन का श्रेय श्री अजित प्रसाद जी को है। वह इसके संस्थापक-महामंत्री रहे और अन्त तक इसकी सभी प्रवृत्तियों का सुचारू संचालन जिस निष्ठा के साथ करते रहे उसका उदाहरण विरल है।

सन् १९७७ ई. में जब उत्तर प्रदेश (अब उत्तरांचल) दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी गठित हुई तब १० वर्ष तक संयुक्त महामंत्री के रूप में कमेटी के प्रायः सभी कार्यों को उन्होंने सम्पादित किया।

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा और उसके मुख पत्र 'जैन गज़ट' का कार्यालय अजमेर से लखनऊ लाने में श्री अजित प्रसाद जी की विशिष्ट भूमिका रही और सन् १९८१ ई. से १९८८ ई. तक वह उक्त साप्ताहिक के प्रकाशन एवं समाचार संपादन से जुड़े रहे। अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद और दिगम्बर जैन महासमिति से भी उनका सक्रिय जुड़ाव रहा तथा समाज के शीर्ष नेताओं से सम्पर्क बना रहा।

दिगम्बर जैन समाज ही नहीं श्वेताम्बर, स्थानकवासी, तेरापंथ प्रभृति सभी आम्नायों के विद्वज्जन, त्यागीवृन्द और श्रावकों से उनका परिचय-सम्बन्ध भगवान महावीर स्वामी के २५००वें निर्वाण महोत्सव हेतु सरकारी आयोजनों के सिलसिले से जो जुड़ा वह अन्त तक सद्भावपूर्ण बना रहा। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., का गठन भगवान महावीर के सभी अनुयायियों का समान रूप से प्रतिनिधित्व करने के लिये किया गया। इस समिति द्वारा स्थापित शोध पुस्तकालय में जैन दर्शन, संस्कृति, साहित्य आदि में शोध करने वाले छात्रों एवं अन्य जिज्ञासुओं के उपयोग हेतु जैन धर्म की सभी आम्नायों का धार्मिक साहित्य ही नहीं अपितु तुलनात्मक अध्ययन के लिये जैनेतर बौद्ध, वैदिक आदि अन्य धर्मों का साहित्य भी संग्रहीत किया गया। साथ ही, सामान्य पाठकों के लिये रुचिकर लौकिक साहित्य भी प्रचुर परिमाण में संकलित हुआ।

फरवरी १९८६ ई. में समिति ने इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की प्रेरणा से उनके प्रधान सम्पादकत्व में एक चातुर्मासिक शोध पत्रिका 'शोधादर्श' का प्रकाशन प्रारम्भ किया। जून १९८८ ई. में डाक्टर साहब के महाप्रयाण के उपरान्त चाचाजी ने हम दोनों भाइयों से 'शोधादर्श' का संपादन संभालने को कहा। वह केवल उसकी प्रबन्ध व्यवस्था से ही जुड़े हुए थे। 'शोधादर्श' या किसी अन्य पत्र-पत्रिका ने सामान्यतया उनकी लेखनी का स्पर्श नहीं किया था। किन्तु नवम्बर १९८८ ई. में 'शोधादर्श' के अंक ८ में 'चिन्तन-कण' के अन्तर्गत (१) 'णमोकार महामंत्र की ऐतिहासिकता पर एक दृष्टि' तथा (२) 'चम्पा के राजा श्रीपाल' पर उन्होंने जो अपनी लेखनी चलानी प्रारम्भ की वह अविकल अन्त तक चलती रही। नवम्बर १९९६ ई. से उन्होंने 'शोधादर्श' के प्रधान संपादक का दायित्व संभाल लिया। 'शोधादर्श' के अंक ८ से अंक ५६ तक ४९ अंकों में श्री अजित प्रसादजी की लेखनी से प्रसूत ३९ सम्पादकीय/अग्रलेख, ६० अन्य लेख, १६३ समाचार विमर्श तथा तीर्थंकर महावीर

स्मृति केन्द्र समिति विषयक २२ प्रगति प्रतिवेदन आदि प्रकाशित हुए। साथ ही 'साहित्य-सत्कार' के अन्तर्गत २६४ कृतियों का समीक्षात्मक परिचय देने का उन्हें श्रेय रहा। श्रमण संस्था और जैन समाज में परिलक्षित हो रही विकृतियों और शिथिलाचार से वह दुखी थे। उनके विरुद्ध निर्भीक हो उन्होंने अपनी धारदार लेखनी चलाई। उनके अग्रलेखों, चिन्तन कणों और समाचार विमर्शों ने समाज को झकझोरा और अनेक प्रबुद्ध जन उनके विचारों से सहमत हो उनके प्रशंसक हो गये। 'शोधादर्श' के अतिरिक्त जयपुर से प्रकाशित पाक्षिक 'समन्वय वाणी' के भी मई १९९३ से प्रधान सम्पादक रहे और उक्त पत्रिका में जनवरी २००५ तक उनके ७४ सम्पादकीय प्रकाशित हुए। इन दोनों पत्रिकाओं के माध्यम से उन्होंने जैन पत्रकारिता को नये आयाम प्रदान किये और इन पत्रिकाओं की प्रतिष्ठा में चार चाँद लगाये। जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में उनके द्वारा किये गये उत्कृष्ट योगदान हेतु उन्हें सन् १९९९ ई. में प्राच्य श्रमण भारती द्वारा आचार्य विमलसागर (भिण्ड) श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार से तथा सन् २००३ में अहिंसा इन्टरनेशनल के प्रेमचंद जैन पत्रकारिता पुरस्कार (वर्ष २००२) से सम्मानित किया गया।

यही नहीं, उनकी विद्वत्ता और अन्य उपलब्धियों को दृष्टि में रखते हुए अन्तर्राष्ट्रीय संस्था अमेरिकन बायोग्रैफिकल इन्स्टीट्यूट, नार्थ कैरोलीना, यू.एस.ए., ने अक्टूबर २००३ में अपनी प्रतिष्ठात्मक उपाधि 'MAN OF THE YEAR-2003' से तथा सन् २००४ ई. में उन्हें अपने **Research Board of Advisors esa Honorary Appointment** देकर सम्मानित किया। जैन मिलन लखनऊ, अग्रवाल सभा लखनऊ, अनन्त-ज्योति विद्यापीठ और उ.प्र. सचिवालय सेवा अधिकारी संघ आदि स्थानीय संस्थाओं द्वारा भी वह सम्मानित किये गये।

चाचाजी का विवाह १८ जनवरी, १९३७ ई. को सरूरपुर (जिला मेरठ) निवासी ला. नाहरसिंह जैन की सुपुत्री धनवती से हुआ था। उनके दो पुत्र सूर्यकान्त और मणिकान्त तथा दो पुत्रियां सरोज और सन्तोष हुईं जो संभ्रांत घरानों में विवाहित हैं। क्रूर काल ने उनके जीवनकाल में ही पहले ४ नवम्बर, १९९३ ई. को उनकी जीवनसंगिनी को तथा तदनन्तर क्रमशः २१ जुलाई, २००० ई. को उनके कनिष्ठ पुत्र और २१ अगस्त, २००२ ई. को उनके ज्येष्ठ पुत्र को उनसे छीन लिया। हृदय आघात और दृष्टिमन्दता से वह पहले से ही ग्रसित थे। किन्तु ये सब आघात समताभाव से सहते हुए वह अविकल अपने कर्त्तव्य-पथ पर चलते रहे, अपने पारिवारिक दायित्वों

का निर्वहन करते रहे और अध्ययन-लेखन कार्य में लगे रहे। चाचाजी की दिनचर्या बड़ी नियमित थीं। वह पहले घर में ही योगासन करते थे, बाद के वर्षों में टहलने के लिए डी.ए.वी. कालेज तक जाने लगे और वहीं योगासन करने लगे। जब तक सामर्थ्य रही वह प्रतिदिन प्रातः जिन मन्दिर दर्शन हेतु जाते रहे। सामर्थ्य न रहने पर घर में ही पूजा-पाठ करने लगे। उन्हें अनेक स्तोत्र-पाठ आदि कण्ठस्थ थे। अखबार पढ़े बिना उन्हें चैन नहीं थी। जितनी पत्र-पत्रिकाएं उनके पास आती थीं उन्हें पूरा पढ़ते थे और यथा आवश्यक उनमें निशान भी लगाते थे। पुस्तकालय हेतु जो पुस्तकें आती थीं उन्हें भी यथासंभव पूरा पढ़ डालते थे। कोई भी अभ्यागत उनके पास से जलपान किये बिना जा नहीं सकता था। उनमें गज़ब की इच्छा शक्ति थी और जीवन जीने की कला वह जानते थे।

सहज मानवीय दुर्बलताओं के रहते हुए वह सद्गुणों से भरपूर एक संवेदनशील मानव थे जो दूसरों की यथाशक्य सहायता करने को तत्पर रहते थे। अपने परिवारजनों के लिये तो वह वात्सल्यमूर्ति थे ही अन्य जन जो भी उनके सम्पर्क में आते थे उनके मधुर व्यवहार से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते थे। उनके चले जाने से जहाँ समाज ने बहुमुखी प्रतिभा के धनी, समाज के सजग प्रहरी एक निडर पत्रकार को खो दिया है वहीं मुझे भी व्यक्तिगत क्षति हुई कि मुझे अब 'बेटा' कहकर पुकारने वाला कोई नहीं रहा। भले ही वह अब सदेह हमारे बीच नहीं हैं उनकी स्मृतियां मेरे मन-मन्दिर में सजी रहेंगी।

उनके जीवन के विविध पहलुओं, बहुआयामी व्यक्तित्व और कृतित्व को रेखांकित करने के उद्देश्य से उनके महाप्रयाण पर उनके स्वजनों, इष्टमित्रों, स्नेहीजनों और प्रशंसकों से प्राप्त संस्मरणों, भावोद्गारों और श्रद्धासुमनों को इस अंक में संजोया गया है। उनकी लेखनी से कुछ चयनित अंश और 'शोधादर्श' एवं 'समन्वय वाणी' में किये गये उनके योगदान का विवरण भी इसमें समाहित है। यदि यह अंक उनकी पुण्य स्मृति को अक्षुण्ण रखने में और पाठकों को उनके व्यक्तित्व से प्रेरणा लेने में सक्षम हो सका तो यह हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

- रमा कान्त जैन

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ

अग्रज का पत्र अनुज के नाम

(पुराने कागजात को छांटते समय कीड़ों की कृपा और दीमकों की दया से बचा रह गया अब से लगभग ६६ वर्ष पहले बड़े भाई ज्योति प्रसाद जैन द्वारा अपने अनुज अजित प्रसाद जी को लिखा गया यह पत्र हस्तगत हुआ जो अग्रज के अपने अनुज के प्रति अपार स्नेह का परिचायक है। साथ ही उस समय २७ वर्ष की वय में, डॉ. ज्योति प्रसाद जी की दिनचर्या आदि का भी परिचय देता है। उस समय द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ जाने से वस्तुएँ महंगी होने लगी थीं और उसके विरोध में जनाक्रोश से जगह-जगह मंडी लूट ली गई थी। उस तथ्य का संकेत भी इस ऐतिहासिक पत्र में है। - रमा कान्त जैन)

मेरठ कचहरी

११-१२-३६

परम प्रिय प्राणाधिक अजीत बाबू

आयुष्मान भव!

यहाँ सब सकुशल हैं और तुम्हारी कुशल मंगल श्री जी से सदा शुभ चाहते हैं। अपरञ्च पत्र तुम्हारा मिला हाल मालूम हुआ। मैं शनिवार को बड़ौत से आ गया था। एक कार किराये पर ले गया था। बारात बड़ौत से सिकन्दराबाद गई थी। रास्ता बड़ा खराब था। शादी अच्छी हो गई। खातिर काफी थी और देना लेना भी मामूली तौर से अच्छा हुआ। सरूरपुर भी उतरे थे। शशि एक रात वहीं रहा था। मम्मू भी गया था।

एक लेख लिखा है उसे एक दो रोज बाद फिर पढ़कर व ठीक करके 'अनेकान्त' में भेजने का विचार है। और सब ठीक ठाक चल रहा है।

सबेरे ५-५½ बजे से घंटा दो घंटा कानून वगैरह पढ़ते हैं। शाम को भी कुछ पढ़ते हैं। शास्त्र सभा भी चल रही है। काफी busy रहते हैं। जैन सभा और बोर्डिंग हाउस के हालात भी ठीक चल रहे हैं। तुम X-mas पर अवश्य आना। मौका लगा तो महावीर जी जायेंगे।

अब तबियत कैसी रहती है लिखना। अपना कुशल पत्र बराबर डालते रहा करो। स्वास्थ्य आराम का पूरा ध्यान रखना। कोई आवश्यकता हो तो लिखना। कोई विशेष बात हो तो लिखना।

लालाजी व भाभी तुमको आशीष कहते हैं और शशि-मम्मू हाथ जोड़कर जय कहते हैं। किसी चीज की आवश्यकता हो तो तुरन्त लिखना, किसी तरह की तकलीफ मत उठाना। बड़े दिन पर आ ही जाना।

तुम्हारे मुस्तकिल होने के अब क्या chances हैं सो भी लिखना। और Senior grade की बाबत क्या रहा यह भी लिखना।

आजकल अकरा हर चीज़ का है। कई जगह मंडी वग़ैरह भी लुट गयी। यहाँ तो अभी ग़नीमत है पर अफ़वाह अभी भी रहती है।

आजकल ताज़े फल और मेवों का काफ़ी स्तैमाल रखना। तुम खुश रहो। पत्र बराबर देते रहो। शशि-मम्मू तुम्हें याद करते हैं।

पत्रोत्तर देना।

तुम्हारा
ज्योति

आदरणीय मामाजी

- श्री सुरेश चन्द जैन, मसूरी

दिसम्बर १९४६ ई. में मेरा विवाह मेरठ निवासी श्री शीतल प्रसाद जैन सौदागर की सुपुत्री कनकमाला से हुआ था। श्री अजित प्रसाद जी कनक के मामाजी थे अतः मेरे मामाजी भी हो गये। उनका सतत स्नेह मुझे प्राप्त रहा। वह प्रारम्भ से ही धर्मनिष्ठ रहे। अपने संस्कारों से वह निर्मल-विमल भावों से जीवन पर्यन्त सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र के कार्यों में सहभागी रहे। उन्होंने जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में निर्भीक होकर खुले हृदय से समाज की अन्तिम श्वास तक सेवा की। वह समाज के गौरव थे। हमने उनके लेखों के द्वारा बहुत कुछ सीखा, बहुत कुछ पाया है। उनके इन उपकारों से हम कभी भी उऋण नहीं हो सकते।

जितने भी लेख, कवितायें समय-समय पर **शोधादर्श** में छपती रही हैं अधिकतर मनन के योग्य हैं। जैन समाज मे आज कुछ कुरीतियां आ गई हैं जिनसे समय-समय पर उन्होंने बड़े मार्मिक ढंग से समाज को चेताया है। ऐसे निर्भीक पत्रकार विरले ही जन्म लेते हैं।

हमारी सच्ची श्रद्धांजलि उनके प्रति यही होगी कि हम उनके पद चिन्हों पर चलते रहें।

स्मृति के झरोखे से

श्री अजित प्रसाद जैन से मेरा आदर और स्नेह का संबंध था क्योंकि वे मेरे रक्त सबंधी, स्नेह-भाजन और आदरणीय चाचाजी थे। उनके संबंध में जो स्मृतियां हैं वे मेरे जन्म-काल से ही जुड़ी हुई हैं, जब उन्होंने मुझे गोद में खिलाया था। वयस्क होने पर उनका मेरे प्रति एक मित्र के समान सद्‌भावपूर्ण व्यवहार रहा। धर्म के प्रति उनकी प्रगाढ़ निष्ठा थी, परन्तु वे मेरे खुले ढंग से सोचने की विधा को सम्मान देते थे। ऐतिहासिक प्रश्नों पर चर्चा में वे मुझसे प्रायः जिज्ञासा करते थे और सहमत भी होते थे।

एक ऐसा प्रकरण था कालानॉस के विषय में। कालानॉस एक साधु था जिससे भारत पर आक्रमण के समय यूनान के राजा सिकन्दर ने भेंट की थी और वह उसे अपने साथ ले भी गया था। कुछ जैन विद्वानों ने कालानॉस को 'कल्याण मुनि' के नाम से प्रसिद्ध कर दिया। चाचाजी ने मुझसे पूछा कि मेगस्थनीज़ ने अपनी भारत यात्रा का जो विवरण छोड़ा है उसमें इस प्रकरण का किस प्रकार उल्लेख है। जब मैंने उन्हें बताया कि कालानॉस के 'कल्याण मुनि' होने का प्रश्न ही नहीं उठता तो उन्होंने यह तो माना कि कल्याण मुनि नाम का प्रश्न नहीं उठता, परन्तु फिर यह प्रश्न शेष रह जाता है कि इस शब्द के प्रयोग का क्या कारण था। मुझे समझ में आया कि जो भी मुनि या साधु रहे होंगे उन्होंने आशीर्वाद स्वरूप 'कल्याणम् अस्तु' कहा होगा और वह 'कल्याणमस्तु' ही विदेशी यूनानियों की भाषा में 'कालानॉस' बन गया। यह कुछ उसी प्रकार था जैसा कि कलकत्ता के संबंध में किंवदन्ति है कि जब जॉब चारनॉक उस स्थल पर पहुँचा तो वहाँ एक पेड़ कटा पड़ा हुआ था। जो लोग वहां दिखाई दिए उनसे चारनॉक ने पूछा कि इस स्थान का क्या नाम है। वे लोग समझे कि साहब यह जानना चाहते हैं कि यह पेड़ कब कटा और उन लोगों ने कहा "कल कटा"। चारनॉक साहब ने समझा कि इस स्थान का नाम कैलकटा है और उन्होंने उसे इसी रूप में प्रख्यापित कर दिया। इस चर्चा के परिप्रेक्ष्य में कालनॉस के संबंध में चाचाजी का एक लेख **शोधादर्श** १६-१७ में "क्या Kalanos (कल्याण मुनि?) दिगम्बर जैन मुनि था?" शीर्षक से प्रकाशित हुआ है।

प्रायः इस प्रकार की चर्चाएं हम चाचा-भतीजों के बीच होती रहती थीं। सामाजिक और धार्मिक विषयों पर भी हम लोगों की उन्मुक्त रूप से चर्चा होती थी।

समाधिमरण पर वे स्वयं शास्त्रनिष्ठ श्रद्धान रखते थे, परन्तु मेरे विचारों पर भी ध्यान देते थे। जब वे मृत्यु से जूझ रहे थे तो उन्हें स्वयं भी यह आभास हुआ कि शास्त्रोक्त विवेचन व्यावहारिक नहीं है और उन्होंने अपने विचार **शोधादर्श** ५५ में अग्रलेख के रूप में दिए।

तदपि वे एक धर्मनिष्ठ श्रद्धालु दिगम्बर जैन तेरहपंथी शुद्ध-आम्नायी श्रावक थे। उनकी निष्ठा इतनी गहरी थी कि जब उनकी प्रायः सभी इंद्रियां अत्यन्त शिथिल हो गईं तो वे अपने प्रिय पाठों को स्मरण से ही दोहराया करते थे। अप्रैल २००४ में उनको जब चौथा व ५वां हृदय-आघात हुआ, उसके बाद मैंने और छोटे भाई रमा कान्त ने उनको दृढ़ता से घर से बाहर जाने-आने के लिए मना कर दिया था। हम दोनों भाई स्वयं ही उनसे सप्ताह में २-३ बार मिलने जाते थे, परन्तु धर्म के जोश में वे गत वर्ष सुगन्धदशमी, अनन्त चतुर्दशी और क्षमावाणी के दिन मन्दिर चले गए और सीढ़ी चढ़ के दर्शन कर आए। दीपावली पर भी वे निर्वाण लाडू चढ़ाने चले गए। हमने इस पर अपना रोष भी प्रकट किया तो वे कहने लगे कि और सब नैत्यिक कार्य होते ही हैं इसलिए इन पर्व के दिनों में भगवान का दर्शन क्यों छोड़ा जाए।

हमारे घर से चाचा जी के घर का रास्ता लगभग १५ मिनट का है, इस रास्ते को तय करने में उन्हें लगभग एक घण्टे का समय लगा और बीच में कई जगह रुककर बैठना पड़ा। जब हमें मालूम हुआ तभी हमने उनसे स्पष्ट रूप से अनुरोध किया कि अब वे चलकर नहीं आवेंगे। हम उन्हें, जब उनकी इच्छा होगी, स्वयं लिवा लाएंगे। गत वर्ष ६ सितम्बर को मेरे कनिष्ठ पुत्र की बेटी के जन्म दिवस पर उनकी सब बच्चों से मिलने की प्रबल इच्छा हुई, अतः उन्हें उनका पौत्र गाड़ी में बैठाकर ले आया। अपने अग्रज के परिवार के सभी बच्चों से मिलकर उनको अतीव आनन्द हुआ। यह हमारे घर पर उनका अंतिम आगमन था।

दिसम्बर माह से वे पूरी तरह शैयाग्रस्त हो गए। तब हम दोनों भाई प्रतिदिन ही उनसे मिलने कुछ समय के लिए जाते थे। फरवरी में एक दिन जब ठण्ड का अत्यन्त प्रकोप था अर्द्ध रात्रि के समय हमारी छोटी बहू माया का टेलीफोन आया कि बाबू जी की तबियत बहुत खराब है और वे आपसे मिलने को व्यग्र हैं। मैं और रमा कान्त उनके पास गए तो उनको एक प्रकार की शान्ति की अनुभूति हुई। हम दोनों भाइयों ने और बहुरानी ने उनके मनपसन्द **भक्तामर स्तोत्र** और **कल्याणमन्दिर स्तोत्र** का पाठ किया तो धीरे-धीरे उनको शान्ति मिली और नींद आ गई। उनके सो

जाने के बाद हम लोग चले आए। यह उनका हम दोनों भाइयों के प्रति प्रगाढ़ स्नेह था कि जब भी वे असह्य बेचैनी का अनुभव करते थे तो हमें याद करते थे और हम दोनों भाई भी उनके सानिध्य में पहुँच जाते थे।

चाचाजी के निधन से एक व्यक्तिगत क्षति तो यह हुई कि अब मुझे 'शशि' कहकर बुलाने वाला कोई बुजुर्ग नहीं रह गया, और दूसरी क्षति यह हुई कि अब धार्मिक और सामाजिक विषयों पर मुझसे उन्मुक्त रूप से और खुले दिमाग से चर्चा-विमर्श करने वाला सहृदय मनीषी भी नहीं रह गया। समाज, धर्म और जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में उनके जाने से जो रिक्तता पैदा हो गई है वह अपनी जगह अपूरणीय है, परन्तु हम दोनों भाइयों के लिए और विशेष रूप से मेरे लिए जो स्नेह और वैचारिकता के क्षेत्र में शून्य उपस्थित हो गया है वह हमें निरन्तर ही सालता रहेगा।

७.६.२००५ — **- शशि कान्त**

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ

हृदय को गहरा आघात

- संत ॐ पारदर्शी

जन-जन की श्रद्धा के केन्द्र परम श्रद्धेय 'शोधादर्श' आदि पत्र-पत्रिकाओं के सशक्त-सम्पादक विद्वान-मनीषी, जिन-शासन के सजग-प्रहरी, जैन-अजैन समाज के लोकप्रिय जन-सेवक सम्माननीय श्री अजित प्रसाद जी जैन सा. के २५ जून ०५ को स्वर्ग-गमन का समाचार पढ़कर स्तब्ध रह गया- हृदय को गहरा आघात लगा।

सादा जीवन उच्च विचारों की प्रतिमूर्ति श्री अजित प्रसाद जी जैन सा. के स्वर्गवास से साहित्य-जगत को जो क्षति हुई है उसकी पूर्ति निकट भविष्य में होना असम्भव है। लेकिन विधि के अटल-विधान को हमें नतमस्तक होकर स्वीकार करना ही पड़ता है।

इस असहनीय परम-चरम दुःख के क्षणों में श्री अरहन्त प्रभु से हृदय के अन्तरतम प्रदेश से यही प्रार्थना करता हूँ कि वे अपनी महती-कृपा से स्वर्गस्थ आत्मा को सद्गति एवं शोक-संतप्त परिवारजनों को इस मर्मान्तक-असहनीय दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

- पारदर्शी साधना केन्द्र, उदयपुर

भाई अजित प्रसाद

- पत्रकारिता-भूषण श्री ज्ञानचंद जैन

भाई अजित प्रसाद पुरुषार्थ में विश्वास करते थे। बड़े जीवट के आदमी थे। उनके व्यक्तित्व में विनम्रता के साथ फौलादी दृढ़ता की रेखाएं भी थीं। दृढ़ संकल्पवान थे। बुद्धि और युक्तियुक्त तर्क से शासित होते थे, अंधविश्वासों, अंधरूढ़ियों तथा सामाजिक मूढ़ताओं के कट्टर विरोधी थे। दबंग आदमी थे।

वह पत्रकारिता के क्षेत्र में मेरे सहधर्मी थे। मेरे जीवन की आधी शती हिन्दी भाषा तथा साहित्य की सर्वतोमुखी उन्नति और उसके माध्यम से समाज तथा देश के नवजागरण में अपना यत्किंचित् योगदान करने के महत् उद्देश्य की डोर में बंधकर दैनिक हिन्दी पत्रकारिता में बीती। भाई अजित प्रसाद ने उत्तर प्रदेश की प्रशासनिक सेवा से अवकाश-ग्रहण के बाद जैन धर्म तथा समाज की सेवा करने की पूत भावना से पत्रकारिता को अपना क्षेत्र बनाया। अपने स्वनामधन्य इतिहास-मनीषी बड़े भाई डॉ. ज्योति प्रसाद की भांति जैन धर्म में दृढ़ आस्था उन्हें अपने पारिवारिक परिवेश से प्राप्त हुई। भगवान महावीर को वह आदर्श महापुरुष और अपना इष्टदेव मानते थे।

वह मानते थे-तीर्थंकर महावीर ने निर्भय होकर मरने की कला ही नहीं सुखपूर्वक जीने की कला भी सिखाई। जीने की कला अर्थात् किंचित् संयम का पालन करते हुए पूर्ण स्वस्थ रहकर मर्यादापूर्वक इन्द्रियों के भोगोपभोग का भरपूर आनंद लेते हुए गृहस्थाश्रम में सुखपूर्वक जीवन यापन करना, इसी का नाम जैन श्रावकाचार है। श्रावकाचार जैन धर्म की सदाचार-संहिता है, आदर्श गृहस्थ एवं समाज के आदर्श सदस्य बनने की विधि है, आदर्श समाज संरचना का प्रयास है। वह जैन धर्म को आध्यात्मिक उत्कर्ष का धर्म मानते थे। उसमें कर्मकांड का मेल बाद में हुआ।

उन्होंने अपने पत्रकार धर्म का निर्वाह यत्नपूर्वक किया। पत्रकारिता के आवश्यक गुण हैं- उत्तरदायित्व, सभी प्रकार के दबावों से परे रहकर अपनी लेखनी की स्वतंत्रता की रक्षा, जो बात हृदय में सच लगे उसे निर्भयता तथा निष्पक्षता से प्रकट करना, सबके प्रति न्याय की भावना। अपने सम्मान में आयोजित एक समारोह में उन्होंने कहा था- "हमारी दृष्टि में पत्रकार की भूमिका केवल एक समाचार वाहक तक सीमित नहीं है वरन् उसकी यह भी एक चुनौतीपूर्ण जिम्मेदारी है कि वह

सामाजिक-धार्मिक क्षेत्र को प्रभावित करने वाली घटनाओं का पूर्ण निष्पक्षता के साथ विश्लेषण कर समाज का मार्गदर्शन करे। पत्रकार को धर्म के क्षेत्र में नित नवीन उत्पन्न हो रही विसंगतियों के प्रति भी समाज के प्रबुद्ध वर्ग का ध्यान आकर्षित कर उन्हें सचेष्ट करना चाहिए ताकि उन विसंगतियों की रोकथाम हो सके और इस प्रकार उसे धर्म-समाज के एक सजग प्रहरी की भूमिका भी अदा करना चाहिए।" **शोधादर्श** के प्रधान संपादक का पद-भार ग्रहण करने के बाद उन्होंने अपनी इस भूमिका का निर्वाह अपनी पूरी योग्यता के साथ किया।

शोधादर्श के आद्य संपादक डॉ. ज्योति प्रसाद के समय से मैं उसके प्रथम अंक से उसका नियमित पाठक रहा। डॉ. ज्योति प्रसाद उपाधि से नहीं वास्तव में विद्यावारिधि थे। उन्होंने जैनविद्या के शोध, अन्वेषण तथा अनुसंधान में उल्लेखनीय योगदान किया। **शोधादर्श** को एक शोध पत्रिका का रूप दिया। उनके न रहने पर बंधुवर डॉ. शशि कांत ने उनका पदभार संभाला। वह भी भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्व के मान्य विद्वान हैं। चिंतक भी हैं। उन्होंने **शोधादर्श** को उसी पूर्व निर्धारित पथ पर चलाया। भाई अजित प्रसाद ने अपने संपादन काल में उसमें एक सामयिक पत्रिका का रस भी भर दिया। मैं उनके विचारपूर्ण लेख, सम्पादकीय तथा सामयिक टिप्पणियों को बड़े मनोयोग से पढ़ता था। वे विचारप्रेरक होते थे। वह अपने हृदय के सच्चे उद्‌गारों को बड़ी निर्भीकता तथा प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करते थे। उनमें गहरी आस्था के साथ बुद्धि -तत्व का भी मेल रहता था। क्या ही अच्छा हो, उनका जो श्रद्धांजलि अंक निकाला जाय उसमें उनके कुछ यादगार लेखों, सम्पादकीय तथा टिप्पणियों के मुख्य अंशों को भी संकलित कर दिया जाय।

भाई अजितप्रसाद किस धातु के बने थे, इसकी जानकारी उनके जीवन की कतिपय घटनाओं से मिलती है। जिस वर्ष परिवारजनों ने उनका अमृत महोत्सव मनाया, उसी वर्ष उनकी जीवन-संगिनी का वियोग हुआ। वह जीवन संग्राम में अकेले पड़ गये, फिर भी अपने कर्त्तव्य-पथ पर आरूढ़ रहे। बुढ़ापे में पुत्र ही पिता का सहारा बन जाते हैं। उनके दो पुत्र थे। कनिष्ठ पुत्र के वियोग का दुख अपनी आयु के ८२वें वर्ष में उठाना पड़ा। उसके दो वर्ष बाद उनके ज्येष्ठ पुत्र का भी देहांत हो गया। उनके बुढ़ापे की दोनों लाठियां आयु के ८४वें वर्ष में उनके हाथ से छिन गईं। एक पिता के जीवनकाल में ही उसके दो जवान पुत्रों का इस रीति से चला जाना कितना बड़ा वज्रपात होता है, इसे भुक्तभोगी ही जान सकते हैं। फिर भी वे अपने कर्त्तव्यपथ पर अविचलित भाव से चलते रहे।

उनको पहला हृदयाघात सत्तर की आयु पार करने के बाद १९८९ में हुआ था। चार वर्ष बाद दूसरा गंभीर हृदयाघात हुआ। एक वीर योद्धा की भांति इन दोनों हृदयाघातों को झेल गये और निरंतर अध्ययन, मनन तथा लेखन-कर्म में लगे रहे। आँखों की रोशनी क्षीण हो जाने से चश्मा काम नहीं करता था। माइक्रोस्कोपिक लेन्स की सहायता से लिखने-पढ़ने का काम करते थे। दूसरे हृदयाघात के बाद तीन और आघात झेलने पड़े। शरीर एकदम जर्जर हो गया। बिस्तर से लग गये। गत वर्ष जुलाई के **शोधादर्श** में अपनी अंतिम अभिलाषा अभिव्यक्त की। उसमें लिखा-

"मैंने अपने धर्म और समाज से बहुत कुछ सीखा और पाया है। उनके उपकार से कभी उऋण नहीं हो सकता। मेरी एक यही अभिलाषा है कि जिनेन्द्रदेव की अनुकम्पा से मुझमें इतनी शक्ति बनी रहे कि मैं अन्तिम श्वांस तक धर्म व समाज की कुछ न कुछ सेवा करता रह सकूं।"

उन्होंने अपना यह संकल्प पूरा किया। आसन्न मृत्यु से तीन दिन पूर्व उन्होंने **शोधादर्श** के लिए अपना अंतिम संपादकीय लिखवाया।

वह अंतिम क्षण तक एक वीर योद्धा की भांति मृत्यु से संघर्ष करते रहे। **शोधादर्श** में जब उनका 'अंतिम अभिलाषा' शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ तो अनेक स्नेही बंधुओं और शुभचिंतकों ने उन्हें समाधिमरण की सलाह दी। उन्होंने समाधिमरण पर स्वानुभव अपनी आसन्न मृत्यु से पांच महीना दस दिन पूर्व अंकित कराये। उनका यह एक पठनीय लेख है और उनके रूढ़ि-मुक्त स्वतंत्र चिंतन-मनन का परिचायक है। **शोधादर्श** (मार्च २००५) में प्रकाशित है।

उन्होंने **समाधिमरण पाठ, समाधि दीपक** आदि का अध्ययन-मनन किया। मृत्यु महोत्सव को समर्पित **'दिशा बोध'** का अंक भी पढ़ा। उन्हें लगा, यह सारा साहित्य उस समय रचा गया जब उनके रचयिताओं से आसन्न मृत्यु कोसों दूर थी। यदि उनकी मृत्यु आसन्न होती तो शायद उस साहित्य की रचना न कर पाते।

उन्हें लगा, समाधिमरण की जो प्रक्रिया (विधि-विधान) बताई जाती है वह तो आसन्न मृत्यु के समय स्वतः सम्पन्न होती जाती है। भूख-प्यास, तृष्णाएं शान्त हो जाती हैं। वस्त्राभूषण आदि का शौक भी छूटता चला जाता है। जहां तक परिग्रहत्याग का सम्बंध है या आहार की मात्रा धीरे-धीरे घटाने की बात है, वह सामान्य आसन्न मृत्यु की स्थिति में स्वतः कम होते चले जाते हैं। यद्यपि लोभ और मोह, राग और द्वेष पूर्णतः तो नहीं छूट पाते, किन्तु जीवन और दुनिया के अनुभवों से परिपक्व वृद्ध

व्यक्ति जीवन के इस अन्तिम पड़ाव पर काफी-कुछ इनसे अपने को मुक्त कर लेता है। रही अन्त समय धर्म ध्यान में मन लगाने की बात, उन्होंने लिखा "स्वअनुभव के आधार पर आपसे पूछना चाहूंगा कि जब शारीरिक या मानसिक वेदना से ग्रसित हो आपके मुख से 'हाय, हाय' निकल रही हो, तब प्रभु नाम कैसे उच्चारित होगा, भले ही सारी जिन्दगी आप धर्मनिष्ठ रहे हों।"

जिस समाधिमरण, सल्लेखना आदि को धर्ममरण, मृत्यु महोत्सव आदि कहकर महिमा-मंडित किया जाता है वह उन्हें आत्महत्या अथवा इच्छा-मृत्यु का पर्यायवाची लगा।

उनका सुविचारित मत था-जब तक आत्मपखेरू स्वयं ही देहतत्व से मुक्त नहीं हो जाता मनुष्य को अपनी ओर से उसे विलग नहीं करना चाहिए और संतोषपूर्वक अपने यत्किंचित् कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए अपनी जीवन-डगर पर बढ़ते चला जाना चाहिए।

भाई अजित प्रसाद के बड़े भाई डॉ. ज्योति प्रसाद से मेरा घनिष्ठ सौहार्द भाव था। मुझे विद्वानों, गुणीजनों, इतिहासवेत्ताओं तथा साहित्यकारों का सत्संग प्रिय है। अतएव मैं उनके यहां अक्सर चला जाता था। उनके नाते उनके परिवार के सभी सदस्यों से मेरा सौहार्द भाव था। भाई अजित प्रसाद से मेरा परिचय कम से कम पांच दशक से था, किन्तु उनके व्यक्तित्व का अंतरंग परिचय उनके **शोधादर्श** के सम्पादकत्व काल में मिला। वह मेरे आयु-वर्ग के थे, मुझसे एक महीना और सात दिन बड़े थे। उनके चले जाने से मैंने भी अपना एक बंधु खो दिया है।

- शिखर भवन, यहियागंज, लखनऊ

सूचना

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी द्वारा संचालित अपभ्रंश साहित्य अकादमी द्वारा 'पत्राचार अपभ्रंश सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' का चौदहवां सत्र १ जनवरी, २००६ से आरंभ किया जा रहा है। इसमें हिन्दी एवं प्रान्तीय भाषा विभागों के साथ-साथ अन्य सभी विभागों के अध्यापक, शोधार्थी, अध्ययनरत छात्र एवं संस्थानों में कार्यरत विद्वान सम्मिलित हो सकेंगे। नियमावली एवं आवेदन पत्र दिनांक ३० नवम्बर, २००५ तक अकादमी कार्यालय- दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-३०२००४ से प्राप्त करें। कार्यालय में आवेदन पत्र पहुंचने की तारीख १५ दिसम्बर, २००५ है।

व्यक्तित्व के प्रतिष्ठापक

- डॉ. गणेशदत्त सारस्वत (सम्पादक : मानस चन्दन)

'शोधादर्श' के जुलाई अंक से श्रद्धेय श्री अजित प्रसाद जैन के महाप्रयाण की सूचन पाकर हार्दिक दुःख हुआ। वास्तव में, वे व्यक्ति नहीं, व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा थे। उन्होंने सेवा का जो आदर्श प्रस्तुत किया है वह न केवल प्रशंसनीय है वरन् अनुकरणीय भी है। आध्यात्मिक संस्कार उन्हें उत्तराधिकार में मिले थे। इसीलिए उदात्त जीवन जीने की उन्होंने आजीवन चेष्टा की। राजकीय सेवा में उच्च पद पर रहते हुए भी उनके ये संस्कार कभी धूमिल नहीं हुए। इसके विपरीत विषम परिस्थितियों में इनमें और भी निखार आया। जैन मत को सर्वग्राही, सर्वव्यापी तथा सर्वस्पर्शी बताने के लिए उन्होंने मनसा, वाचा, कर्मणा जो सात्विक उपक्रम किया, उसी का सुखद परिणाम है कि आज इस मत में आस्था रखने वालों की संख्या असीमित है। उनके इस अनुष्ठान को अर्थवत्ता प्रदान करने में **'शोधादर्श'** की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

श्री अजित प्रसाद जी की साहित्य-साधना अविस्मरणीय है। उनका मौलिक चिन्तन उनकी रचनाओं में सहज संलक्ष्य है। उनका लेखन सोद्देश्य है। तुलसी की सूक्ति 'कीरति भनिति भूति भलि सोई, सुरसरि सम सब कहँ हित होई' उनकी रचनाओं में साकार हुई है। जीवन के अन्तिम क्षण तक उन्होंने अपने चिन्तन को वाणी प्रदान की। सरस्वती के ऐसे उपासक, श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों के ऐसे संवाहक तथा भारतीय संस्कृति के ऐसे ध्वजावाहक वर्तमान में दुर्लभ हैं।

मुझे उनके दर्शन करने का यद्यपि केवल एक बार ही सौभाग्य प्राप्त हुआ फिर भी उनकी शालीनता तथा वाग्मिता से प्रभावित हुए बिना न रहा। वे सच्चे अर्थों में 'सारस्वत' थे। **'शोधादर्श'** तथा **'समन्वय वाणी'** के सम्पादक के रूप में उन्होंने जो यशार्जन किया है, वह बहुतों के लिए ईर्ष्या का विषय है।

समझ न पाए आज तक, वह रहस्य है कौन?
जिसके चलते जो मुखर, हो जाता वह मौन।
हो जाता वह मौन, पड़ा तन है रह जाता।
दस द्वारों का किला, अचानक ही ढह जाता।
धू-धू कर वह जला, जिसे थे कण्ठ लगाए।
विवश देखते रहे खड़े, कुछ समझ न पाए।

करना था जो कर चुके, अब क्या करना और?
मोक्षदायिनी गोद में, मिल जाए बस ठौर।

मिल जाए बस ठौर, न कोई और चाह है।
'मैं' का 'तू' में विलय, मुक्ति की सुखद राह है।
जीवन का उत्कर्ष चरम मिट्टी में मिलना।
होता है जो होने दे, चिन्ता क्या करना?

- सिविल लाइन्स, सीतापुर

पूज्य चाचाजी

- डॉ. शैलेन्द्र कुमार रस्तोगी (पूर्व निदेशक, राजकीय संग्रहालय)

पूज्य गुरुवर्य डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी के अनुज श्रद्धेय अजित प्रसाद जैन (चाचाजी) से परिचय 'ज्योति निकुंज' में कब हुआ स्मरण नहीं है लेकिन इतना स्मरण है कि जब कभी भेंट हुई कोई न कोई जिज्ञासा अवश्य परिलक्षित होती थी।

मेरे अध्ययन के प्रणेताओं में जहाँ पूज्य डॉ. ज्योति प्रसाद जी का महान योगदान रहा है वहीं बुंदेलखण्ड के जैन कला क्षेत्रों की एक सरस्वती यात्रा तत्कालीन उत्तरांचल दिगम्बर तीर्थक्षेत्र समिति के माध्यम से दिनांक २५ से २६ जून, १६८१ को पूज्य चाचाजी के साथ सम्पन्न हुई। इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य जैन प्रतिमाओं की जानकारी एवं संरक्षण था। देवगढ़, ललितपुर, सिरौन, कच्ची घाटी, थुवैन, चंदेरी आदि स्थलों के साथ मऊरानी, करगुआ अटा, मदनपुर आदि प्राचीन मंदिरों में अवस्थित जैन विग्रहों का निकट से अध्ययन व दर्शन करने का सुअवसर श्रद्धेय चाचाजी के सान्निध्य में समुपस्थित हुआ। चूंकि चौबीस घंटों का कई दिनों तक साथ रहा इस कारण निकट से देखा कि वे कितना ध्यान रखते थे। मंदिरों की कमेटी भी उनके विचारों से लाभान्वित होती थी। इसी यात्रा में डॉ. अरविन्द जैन, झांसी, तत्कालीन जिलाधीश नेतराम जी, देवगढ़ कमेटी के अध्यक्ष श्री महेन्द्र कुमार जैन, श्री शिखरचंद सिंघई, श्री हरिश्चन्द्र जैन-प्रधानाचार्य, पं. मन्नालाल शास्त्री एवं श्रीयुत राजमल मड़वैया प्रभृति विद्वज्जनों के सम्पर्क में आने का अवसर मिला। मेरी यात्रा के बाद मेरे साथी डॉ. शिवदयाल त्रिवेदी जी, निदेशक झांसी संग्रहालय होकर गए तो वहाँ लोगों ने मेरे नाम की चर्चा की होगी तो त्रिवेदी जी ने मुझसे कहा कि वहाँ तुम क्या कर आये हो जो लोग तुम्हारे नाम का 'ताबीज' पहने हुए हैं।

इसे मैं उसी प्रकार मानता हूँ कि बड़े भाई ने जहां जैन कला पर कार्य करने की प्रेरणा दी वहीं उनके अनुज ने मुझे जैन प्रतिमाओं पर 'हाउसजॉब' का संयोग समुपस्थित किया। ऐसे श्रद्धेय चाचाजी की स्मृति को शत शत बार नमन है, वंदन है।

- राजाबाजार, लखनऊ

एक अपूरणीय क्षति

- पं. नाथूलाल जैन शास्त्री, ४०, हुकमचंद मार्ग, इन्दौर

अस्पताल में रहकर आने पर मुझे अभी २७ जुलाई, २००५ के **'जैन सन्देश'** से आदरणीय श्री अजित प्रसाद जैन के स्वर्गवास का समाचार जानकर अत्यंत दुःख हुआ। मैं उनके विचारों एवं लेखनी से प्रभावित हूँ। समाज में ऐसे निर्भीक समाज हितैषी पत्रकार बहुत कम हैं। सामाजिक गतिविधि का उन्हें भलीभांति ज्ञान होने से समाज में जो भी अशोभनीय कार्य होते थे, उन्हें लिखने और प्रकाशित करने का उनका अद्भुत तरीका था। निन्दा-प्रशंसा से वे सदा दूर रहते थे। ऐसे महान सेवाभावी महान मनीषी के स्वर्गवास से समाज की अपूरणीय महान क्षति हुई है।

१-८-२००५

वात्सल्य भाव के धनी भाई अजित प्रसाद

- श्री सुखमाल चन्द्र जैन, नई दिल्ली

भाई अजित प्रसाद जी के निधन की सूचना आपने मुझे जुलाई में ही दे दी थी। हतप्रभ सा मैं निश्चेष्ट ही रहा। **शोधादर्श** में भाईजी के अन्तिम सम्पदकीय से ही आपको पत्र लिखने की आवश्यकता की पूर्ति का प्रयास कर पा रहा हूँ।

जितने भी सशक्त महापुरुष हो चुके हैं-जिनका अद्भुत जीवन अपने कार्यक्षेत्र के प्रति समर्पित होकर अकल्पनीय घटनाओं, विचारों एवं क्रियाओं से भरपूर रहा है- उनका यह अनुभव रहा है कि समाज और राष्ट्र के विद्वान, नेता, कार्यकर्ता व जनता आपके समर्पित जीवन का अभिनन्दन तो कर देंगे, किन्तु आपकी प्रार्थना के अनुसार अपने जीवन में कोई परिवर्तन नहीं कर पायेंगे। समाज और राष्ट्र की विडम्बना उसी प्रकार कदाचित् वृद्धिंगत भी होगी। बस यही वस्तुस्वरूप है।

शोधादर्श अपना काम करता रहे। सिर्फ यह बताता रहे कि अमुक घटना विडंबना की हुई। इतने से ही कुछ व्यक्तियों के जीवन में, व्यक्तिगत-मान्यता में परिवर्तन ला सकता है।

१६६५ में एक मित्र के पास **शोधादर्श** देखकर, प्रभावित होकर पत्र के साथ मूल्य का चैक भेज दिया। प्रत्युत्तर में अजित प्रसाद जी की अद्भुत स्मृति और वात्सल्यता ने मुझे बताया कि वे भी १६३६-३६ तक शिमले में सर्विस करते रहे थे। और इन अंतिम दस वर्षों में उन्होंने भ्रातृत्व का पत्र-व्यवहार रखा। २३-८-२००५

श्री अजित प्रसाद जैन-एक महामानव

- श्री गया प्रसाद तिवारी 'मानस'
(से. नि. उपसचिव, उ. प्र. शासन)

श्री अजित प्रसाद जैन का निधन हो गया, यह समाचार पाकर मुझे अपार दुःख हुआ। वह एक महामानव थे। उनसे मेरा परिचय तो बहुत पुराना है, किन्तु उनके सद्गुण मुझे सचिवालय से सेवानिवृत्त होने पर ही पता चले।

वह उत्तर प्रदेश सचिवालय में कार्य करते थे। मैं भी सचिवालय में ही कार्यरत था। एक बार मेरे सबसे पहिले अधीक्षक श्री एस.पी. गुप्ता, जो उस समय राज्य बिजली बोर्ड में उपसचिव के पद पर कार्यरत रहे थे, मुझे अपने सुपुत्र के विवाह में, जो आई.ए.एस. की परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके थे, निमंत्रित किया। खूब भीड़भाड़ थी। उस समय उत्तर प्रदेश राज्य के राज्यपाल श्री बी. गोपाल रेड्डी भी आये थे। किन्तु मेरी सीट पर चार व्यक्तियों के बैठने की जगह थी और हम दो ही व्यक्ति वहां बैठे थे। एक थे श्री अजित प्रसाद जैन और दूसरा मैं। दोनों व्यक्तियों ने चार आदमियों का नाश्ता बड़े आनंद के साथ किया। यह मेरा श्री जैन से प्रथम परिचय था। फिर एक बार मेरे विभाग के अधीक्षक के सुपुत्र का विवाह श्री जैन की पुत्री के साथ हुआ था। मुझे वर-पक्ष की ओर से निमंत्रण मिला। मैं गया। वहां सचिवालय के बहुत से अधिकारी तथा कर्मचारी उपस्थित थे। बड़ा आनंद रहा। मैं वर-पक्ष की ओर से गया था। अतएव कन्या-पक्ष के सभी व्यक्ति मेरा स्वागत कर रहे थे।

यह तो रही साधारण परिचय की बात। मेरा असली परिचय श्री अजित प्रसाद जैन से तब हुआ जब वह और मैं सचिवालय से सेवानिवृत्त हो गये थे। सेवानिवृत्ति के पश्चात् वह संस्कृत अकादमी में किसी पद पर कार्य कर रहे थे। मेरे मुहल्ले राजेन्द्र नगर में एक पुस्तकालय है। यह पुस्तकालय १३ दिसम्बर, १९५९ को माननीय श्री चंद्रभानु गुप्त के कर कमलों से स्थापित किया गया था। जबसे यह पुस्तकालय स्थापित हुआ तब से मैं उसकी सेवा किसी ने किसी रूप में कर रहा हूं। सरकारी सेवा से निवृत्ति के पश्चात् मैं इस पुस्तकालय का सचिव बनाया गया। पुस्तकालय की हालत बहुत खराब थी। उसके पास केवल रु. १००/- की धनराशि थी। मैंने बहुत परिश्रम करके पुस्तकालय की दशा ठीक की। एक बार मैं संस्कृत अकादमी में पुस्तकालय के लिए कुछ पुस्तकें मांगने गया। वहां के अधिकारी ने मुझे डांटा कि आप लोग कुछ काम

तो करते नहीं हैं। खैर जो पुस्तकें मैंने पुस्तकालय के लिए मांगी थी वे तो मिल गई। श्री अजित प्रसाद जैन मेरी तथा उस अधिकारी की बातें सुन रहे थे और मुस्करा रहे थे। तबसे जब भी वह मुझे मिलने लगे, पुस्तकालय के विषय में अवश्य पूछते।

एक बार मैं अपनी श्रीमती जी के साथ उत्तर प्रदेश कोआपरेटिव बैंक, नाकाहिण्डोला का ग्राहक बनना चाहता था। बैंक में मेरा किसी से परिचय नहीं था जो मेरी शिनाख्त कर सकता। इतने में श्री अजित प्रसाद जैन वहां आये। उन्होंने एक बैंक फार्म पर, जिस पर मेरी श्रीमती जी और मेरे हस्ताक्षर भी नहीं थे, चुपचाप हस्ताक्षर कर दिये और वह वहां से चले गये। इस प्रकार मैं कोआपरेटिव बैंक का ग्राहक बन गया।

मेरे काव्य-गुरु श्री श्याम बिहारी शर्मा 'बिहारी' अपने शिष्यों से कहा करते थे - "न पठेत् यावनी भाषा, न गच्छेत् जैन मंदिरम्" (यवनों की भाषा-उर्दू, फारसी, अरबी मत पढ़ो और न जैन मंदिर में जाओ)। जहाँ तक उर्दू का प्रश्न है, वह मुझे सातवें-आठवें दर्जे में सेकेंड फार्म के रूप में पढ़नी पड़ी। तब से मैंने अपना उर्दू का ज्ञान बहुत बढ़ाया। जैन मंदिर में जाने का मुझे कभी संयोग नहीं हुआ। हां, **श्रीमद् भागवत पुराण** में जैन धर्म के संस्थापक भगवान श्री ऋषभदेव का चरित्र पढ़ा। उससे मुझे इस धर्म के विषय में कुछ ज्ञान हुआ। श्री अजित प्रसाद जैन इस धर्म के विशेष ज्ञाता थे। वह जैन पत्रिका **'शोधादर्श'** के सम्पादक भी रहे। इस पत्रिका में उनके लेख प्रकाशित होते थे। वह जब इस संसार को छोड़कर चले गये उसके पूर्व तक इस पत्रिका में लेख लिखते रहे। **'शोधादर्श'** पत्रिका पढ़कर मुझे इस धर्म के विषय में कुछ मालूम हुआ।

जब वह बीमार थे तब मैं उन्हें कई बार उनके घर पर देखने गया। वह अनेक बार हार्टअटैक सह चुके थे। उनके निधन के कुछ समय पूर्व मैं उनके घर गया था। वह बहुत अधिक अस्वस्थ थे। अपने लान में धूप में बैठे हुए थे। उनकी बहू कुछ कटे हुए फल लाई और उनके सामने रख करके चली गई। वह फल खाने लगे-कुछ उनके मुंह में जाते थे, कुछ जमीन पर गिर जाते थे। मैंने उन्हें अपने हाथ से फल खिलाए तब वह कहीं खा पाये। कदाचित् यह मेरी उनसे अन्तिम मुलाकात थी। अब वह इस संसार में नहीं हैं। फिर भी उनकी स्मृति हम लोगों के मस्तिष्क में सदैव ताजी रहेगी। इस महामानव को कोटिशः नमन।

- २७२, राजेन्द्रनगर, लखनऊ

श्री अजित प्रसाद जैन-एक संस्मरण

- श्री बी. डी. अग्रवाल, (से. नि. उप सचिव, उ. प्र. शासन)

श्री अजित प्रसाद जैन से मेरा परिचय आज से लगभग ५० वर्ष पूर्व हुआ जब वे उत्तर प्रदेश सचिवालय के खाद्य तथा रसद विभाग में अधीक्षक होकर आये थे और मुझे उनके अधीनस्थ काम सीखने तथा करने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

मुझे याद आता है कि अपने कार्य में दक्ष श्री जैन अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को कितने अपनत्व व प्यार से उनकी कमियां बताते थे और कार्य में निपुण बनने के लिये मार्गदर्शन करते थे।

वे अपना कार्य बिना किसी दिखावे के और कितनी शांतिपूर्वक करते थे यह इसी बात से स्पष्ट है कि उनके साथ कार्य करते हुए मुझे आभास नहीं हो पाया कि उन जैसे एक कार्यकुशल अधिकारी के चेहरे के पीछे एक मूर्धन्य विद्वान, निर्भीक पत्रकार और समाजसेवी का चेहरा भी छिपा हुआ है।

जैसा कि अधिकतर होता है, सरकारी अधिकारियों व कर्मचारियों के कार्य बदलते रहते हैं। मुझे भी उनके मार्गदर्शन में बहुत लम्बे समय तक कार्य करने का सुअवसर प्राप्त न हो सका और हम दोनों ही अलग- अलग विभागों में कार्य करने लगे।

हुआ यह कि मैं चुम्बक की तरह उनकी ओर खिंचता चला गया और सरकारी परिचय कब निजी परिचय में परिवर्तित हो गया मुझे पता ही न चल पाया।

विभिन्न विभागों में कार्य करते हुए भी मेरा उनसे सम्पर्क निरन्तर बना रहा और निजी परिचय भी पारिवारिक परिचय में परिवर्तित हो गया।

मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला, चारबाग, लखनऊ से तो श्री जैन जुड़े हुए थे ही। उन्हीं की प्रेरणा व उत्साहवर्धन से मुझे चारों वेद, कुछ पुराण, बाल्मीकि रामायण व अन्य धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ। अपनों की प्रगति के लिये उनके प्रयत्नशील रहने का यह एक उदाहरण मात्र है।

कालान्तर में मुझे ज्ञात हुआ कि जैन समाज तथा अग्रवाल समाज दोनों ही उनका सहयोग चाहते थे और दोनों ने ही उन्हें सम्मानित किया।

एक निर्भीक, परिश्रमी, कार्यकुशल, अपनत्व की भावना से परिपूर्ण प्रगतिशील व सम्मान से सराबोर जीवन जीने के पश्चात् लगभग ८७ वर्ष की अवस्था में श्री जैन स्वर्गवासी हुए। ऐसी महान आत्मा को मेरा शत शत प्रणाम।

-राजेन्द्र नगर, लखनऊ

श्री अजित प्रसाद जी जैन

(कुछ स्मृतियां तथा श्रद्धा सुमन)

- श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'

श्री अजित प्रसाद जी से मेरा परिचय लगभग पच्चीस वर्ष से था। अतः उनके निधन का समाचार सुन कर मन को एक ठेस सी लगी। मैंने उनमें जिन गुणों का विशेष रूप से अवलोकन किया वे हैं उनकी सरलता, नम्रता, मिलनसारता, धीरता, विद्वता तथा निर्भीकता। ईस्वी सन् १६८० में मुन्ने लाल कागजी जैन धर्मशाला में मुनि श्री लाभ चन्द्र जी महाराज का चातुर्मास चल रहा था। मैं प्रति दिन उनका व्याख्यान सुनने जाता था। व्याख्यान सुनने के पश्चात मैं प्रायः तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र के वाचनालय में बैठ जाता था। वहीं पर डॉ. ज्योति प्रसाद जी तथा श्री अजित प्रसाद जी भी उपस्थित रहते थे। इस प्रकार लगभग पूरे चार मास तक मुझे इन दोनों महानुभावों से वार्तालाप का अवसर मिलता रहा। मुझे आभास हुआ कि श्री अजित प्रसाद जी में अपने अग्रज के प्रति अत्यन्त आदर का भाव है। जब कभी मैं उनसे कुछ जिज्ञासा प्रकट करता था तो वे समाधान प्राप्ति के लिये डाक्टर साहब की ओर इशारा कर देते थे।

चातुर्मास का समय व्यतीत हो गया, किन्तु श्री अजित प्रसाद जी से मिलने के अवसर प्राप्त होते ही रहे। धार्मिक तथा सामाजिक आयोजनों में अक्सर उन से भेंट हो जाती थी। इस के अतिरिक्त डाक्टर साहब के जन्म दिन तथा पुण्य तिथियां भी यह अवसर प्रदान कर देती थीं। वे जब भी मिलते बड़े प्यार से मिलते थे।

इस परिवर्तनशील संसार में कुछ भी स्थिर नहीं। यहां पतन और उत्थान, सृजन और विनाश सब कुछ मानों साथ-साथ अथवा क्रम से चलते रहते हैं। मनुष्य जीवन भी कुछ इसी प्रकार का है। इस का प्रथम छोर है जन्म और अन्तिम छोर है मृत्यु। इन दो किनारों के बीच जो जीवन धारा बहती रहती है उसमें हर क्षण दृश्य अथवा अदृश्य परिवर्तन होते रहते हैं। बाल्य, यौवन तथा वृद्धावस्था सब इसी बदलाव के अंग हैं। यहां कभी खुशियों की ठण्डी हवायें सुख देती हैं तो कभी अग्नि ज्वाला के समान संताप देने वाले कष्ट मानव को दुःखी कर देते हैं। संभवतः कोई भी मनुष्य इसका अपवाद नहीं। किन्तु एक बात स्पष्ट दिखायी देती है कि दुःख के समय में ही मानव के धैर्य गुण की परीक्षा होती है। कवि अमर मुनि जी ने अपनी कृति 'सेठ सुदर्शन' में इस स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया है।

"रंग मंच पर प्रकृति नटी के परिवर्तन नित होते हैं।
अच्छे और बुरे नानाविध दृश्य दृष्टिगत होते हैं।।
पतन और उत्थान यथा क्रम आते जाते रहते हैं।
क्षण भंगुर संसृति की रेखा चित्र खींचते रहते हैं।।
जीवन में सुख दुःखादि का चक्र निरन्तर चलता है।
मानव पद के गुण गौरव का सफल परीक्षण करता है।।

श्री अजित प्रसाद जी के बाल्य तथा यौवन अवस्था के बारे में यद्यपि मुझे कुछ अधिक ज्ञात नहीं तथापि प्रतीत यही होता है कि उनका यह काल सुख पूर्ण ही था। किन्तु प्रौढ़ावस्था में उन्हें हृदय रोग ने आ घेरा और जीवन के अन्त तक उन्हें कई तीव्र आघातों को सहना पड़ा। दुःख की इसी श्रृंखला में उन की धर्म पत्नी भी परलोक सिधार गयीं। तत्पश्चात उनके कनिष्ठ तथा ज्येष्ठ पुत्र भी संसार से विदा हो गये। ये घटनायें किसी भी मनुज को तोड़ने में सर्वथा समर्थ हैं। परन्तु संसार व्यवहार के ज्ञाता श्री अजित प्रसाद जी ने अपने मनोबल को टूटने नहीं दिया। यद्यपि हृदय रोग के तीव्र आघातों से उनका शरीर भी जर्जर हो रहा था तब भी उन्होंने अपनी लेखनी को विराम नहीं दिया। **शोधादर्श** के माध्यम से वे अपने विचार प्रकट करते ही रहे। श्री अजित प्रसाद जी एक सधे हुए विद्वान तथा सफल पत्रकार थे। समस्त धार्मिक तथा सामाजिक विषयों पर उनकी गहरी पकड़ थी। इन विषयों से सम्बन्धित विचारों को वे धारा प्रवाह भाषा में व्यक्त करने में समर्थ थे। सामाजिक कुरीतियों तथा मुनि जनों के शिथिलाचार एवं स्वयं को महिमा मण्डित करने के प्रयासों पर अपनी सशक्त लेखनी द्वारा गहरे प्रहार करते थे। अन्त में-

हे अजित, तुम सरल जन थे नम्र थे गुणवान थे।
सरस्वती के तुम पुजारी श्रेष्ठतम विद्वान थे।।
श्रद्धा-सुमन करता हूँ अर्पण आप से नर धीर को।
सम्मान देता हूँ हृदय से लेखनी के वीर को।।

- १२ सी डी, आदर्श नगर, आलमबाग, लखनऊ

आदर्श सम्पादक : श्री अजित प्रसाद

–श्री संजीव 'ललित'

पलकों से तूफान उठाया जा सकता है।
मौन रहके भी शोर मचाया जा सकता है।।

पत्रकारिता के माध्यम से समाज जागृति की मौन क्रांति का शंखनाद करने वाले **'शोधादर्श'** के सम्पादक श्री अजित प्रसाद जी अब हमारे बीच नहीं रहे यह विचार केवल उन लोगों का हो सकता है जो उन्हें औदारिक शरीर मात्र से जानते थे। मेरे अनुसार वे अब भी हैं और उनके द्वारा धर्म प्रभावना, समाज जागृति के लिए दिए गए विचारों से वह सदैव यशस्वी शरीर से जीवित रहेंगे।

१ जनवरी, १६१८ को मेरठ में बाबू पारसदास जी के घर जन्मे श्री अजित प्रसाद जी ने हिन्दी साहित्य की अभूतपूर्व सेवा की है। आप १६३६ में उ. प्र. की लोक सेवा आयोग द्वारा प्रथम बैच में सचिवालय सेवा परीक्षा में उत्तीर्ण हुए।

आपके अग्रज भ्राता मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जी की वात्सल्य पूर्ण शिक्षा ने आपके पत्रकारिता के गुणों को विकसित करने में उर्वरक का काम किया जिससे आप एक सुलझे हुए पत्रकार बन गये। डॉ. ज्योति प्रसाद जी के पश्चात् **'शोधादर्श'** पत्रिका को आपने अपनी लगन, कठिन परिश्रम एवं सेवाभाव से आज तक नामानुरूप शोध के लिए आदर्श बनाए रखा। सम्पूर्ण साहित्यिक क्षेत्र व जैन समाज आपकी इस सेवा से चिरकाल गौरवान्वित एवं लाभान्वित हुआ है। पत्रिका के सम्पादन दायित्व को बखूबी निभाते हुए अनुसंधान के नए-नए आयाम खोजना आपकी विशेषता रही।

अपने विचारों की तर्क पूर्ण एवं आगम के परिप्रेक्ष्य में विवेचना आप जिस निर्भयता से करते रहे वैसे निर्भीक, सजग सम्पादक अब समाज में उंगलियों पर गिनने लायक बचे हैं। आपने मान-अपमान आदि की परवाह न करते हुए समाज मार्ग च्युत न हो जाए इसके लिए अंतिम श्वास तक प्रयत्न किया।

मैंने अजित प्रसाद जी को साक्षात देखा तो नहीं पर पं. पद्मचन्द्र जी शास्त्री एवं श्री महावीर प्रसाद जी सर्राफ 'शाकाहार प्रचारक' को लिखे गए उनके पत्र पढ़ने का सौभाग्य मुझे गत वर्षों से मिलता रहा है। वीर सेवा मंदिर में कार्यरत होने से श्री अजित प्रसाद जी के पत्र पंडित पद्मचन्द्र जी को पढ़कर सुनाता रहा हूँ तथा श्री महावीर प्रसाद जी भी आपका पत्र आने पर दूरभाष या पत्र के माध्यम से सूचित कर

देते थे। आपने पंडित पद्मचन्द्र जी के **अनेकान्त** ५५/३ में छपे 'भरतरक्षेत्र के सीमन्धर आचार्य कुन्दकुन्द' लेख की समीक्षा करते हुए पत्र में लिखा था कि-

"आपने सीमन्धर शब्द की व्याख्या एवं श्री कुन्दकुन्द की विदेह गमन की अनुश्रुति का खंडन बड़े सुन्दर ढंग से किया है। पर मेरी मान्यता है कि कुन्दकुन्द पद्मनन्दि से भिन्न आचार्य थे।" आपके पत्रों में विशेषता यह रहती थी कि आप अपने एवं जिसको पत्र लिखा है उसके बारे में बहुत कम लिखकर दिगम्बर आगम के साथ हो रही अवमानना एवं समाज के जैनत्व से गिरते स्तर पर चिंता एवं उसके समाधान को विस्तार से लिखते थे। इन सब अनुभवों एवं **शोधादर्श** में छपी उनकी टिप्पणियों के पढ़ने पर मैं दृढ़ता से लिख सकता हूँ कि वे तर्क पूर्ण मनीषा के स्वामी थे, वे उच्चारण से उच्च आचरण को अधिक महत्त्व देते थे, धर्म के नाम पर कोरी आडम्बरता उन्हें पसन्द नहीं थी, सत्य के उद्भावन से उन्होंने कभी समझौता नहीं किया।

श्री अजित प्रसाद जी के लेखों के कुछ अंशों का उद्धरण मैं यहाँ **अनेकान्त** के पाठकों को इस आशा से दे रहा हूँ कि जिन पाठकों ने श्री अजित प्रसाद जी को देखा, सुना, पढ़ा नहीं है वे भी उनके बहुआयामी व्यक्तित्व से परिचित होकर उनके विचारों का लाभ अवश्य उठाऐंगे।

आप एक सफल पत्रकार रहे हैं-२० अप्रैल, ०३ को नई दिल्ली में अहिंसा इंटरनेशनल द्वारा प्रेमचन्द जैन पत्रकारिता पुरस्कार प्राप्त करते हुए उन्होंने अपने हृदय की वेदना व्यक्त करते हुए पत्रकार एवं पत्रिका के विषय में भाषण दिया था। आपने खेद के साथ कहा कि "इस समय सम्पूर्ण जैन समाज में लगभग २०० पत्रिकायें छपती हैं, अकेले दिगम्बर जैन समाज में छपने वाली पत्रिकाओं की संख्या लगभग १०० है। पर विचारिए पत्रिका की परिभाषा-उत्तरदायित्व, अपनी स्वतंत्रता, सभी दबावों से परे रहना, सत्यता प्रकट करना, निष्पक्षता, समान व्यवहार एवं समान आचरण की कसौटी पर आज की कितनी पत्रिकायें खरीं उतर सकती हैं। हमारे कितने पत्रकार, लेखक भाई पत्रकारिता के इन कर्तव्यों का निर्वाह कर पा रहे हैं। अधिकांश पत्रिकायें तो व्यक्ति या पक्ष विशेष की प्रशंसाओं से ही भरी रहती हैं।"

श्री अजित प्रसाद जी जैन दर्शन, जैन सिद्धान्त के अच्छे जानकार थे। जैन दर्शन के जानकार होने से ही आपकी लेखनी केवल सामाजिक विषयों तक सीमित न होकर दर्शन क्षेत्र के गूढ़ रहस्योद्घाटन में भी सफल रही। **शोधादर्श** के नवम्बर २००१ के

अंक में आपने पार्श्वगिरि पर आचार्य प्रतिमाओं की स्थापना के समाचार मिलने पर लिखा था कि –"आचार्यों/मुनियों की तदाकार प्रतिमाओं की विधिवत् प्राण-प्रतिष्ठा कर जिन मंदिर में विराजमान करना बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध की ही देन है। इन साधु प्रतिमाओं की प्राण-प्रतिष्ठा के क्या अर्थ हैं, हम जैसे अल्पज्ञों की सामान्य बुद्धि के लिए अगम्य है।"

शोधादर्श नवम्बर २००२ के सम्पादकीय-'मंगलम् पुष्पदंताद्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम्' में आपके व्यंग्यात्मक शैली में लिखे गए सजग दूरदर्शी विचार सभ्य समाज की रक्षा के लिए सजग प्रहरी के समान हैं। मार्च २००२ के अंक में आपने विद्वत् परिषद के बिखराव की व्यथा भी लिखी थी। आप धर्म परायण थे अतः आप आगम के मूल रूप में छद्म परिवर्तन करने वालों से समाज को सजग करने का अपना कर्तव्य आखिर तक निर्वहन करते रहे।

श्री अजित प्रसाद जी सच्चे मुनि भक्त थे। आप केवल आगमानुकूल चर्यारत गुरुओं के प्रति अनन्य श्रद्धा रखते थे। आपकी स्पष्ट मान्यता थी कि समाज सुधार धर्मगुरुओं के माध्यम से ही हो सकता है। 'समाज सुधार में धर्मगुरुओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो' लेख में आपने लिखा है कि - "आज अकेले दिगम्बर जैन आम्नाय में पिच्छीधारी धर्मगुरुओं/गुरुणियों की संख्या ५०० के लगभग होगी तथा उनके अकेले चातुर्मास काल पर ही समाज का अरबों व्यय हो जाता है। हमें धर्म प्रभावना के नाम से किए गए किसी भी आयोजन पर कोई आपत्ति नहीं है, यद्यपि वैभवपूर्ण प्रदर्शनों से समाज का कोई भला नही होता। वृहद् क्रिया काण्ड भी जैन धर्म की मूल भावना से मेल नहीं खाते।

हमारे धर्मगुरु/गुरुणियां जिनके प्रति समाज में अत्यन्त श्रद्धा व सम्मान है कुछ समाज सुधार की ओर भी ध्यान दें तो उनका समाज पर स्थायी उपकार रहेगा। जैसा कुछ मुनि श्रावकों को दिन में विवाह करवाने, विवाह में अपव्यय न करने, दहेज कुप्रथा का विरोध करने आदि का उपदेश अपने प्रवचनों में देकर कर रहे हैं।"

प्रकाण्ड तर्कणा शक्ति के धनी श्री अजित प्रसाद जी का जीवन सादा एवं सरल था। वे दिखावे में विश्वास नहीं रखते थे। आपने देश, समाज से अल्प लेकर बहुत अधिक दिया है। आप उत्तम कोटि के पुरुष थे। कविवर बुधजन की ये पंक्तियां आप पर बिल्कुल सटीक बैठती हैं-

अलप थकी फल दे घना, उत्तम पुरुष सुभाय।
दूध झरै तृण को चरै, ज्यों गोकुल की गाय।।

आपने **शोधादर्श** जुलाई २००४ के अंक में "मेरी अन्तिम अभिलाषा' शीर्षक से लिखा है- "मेरी एक ही अन्तिम अभिलाषा है। मैंने अपने धर्म और समाज से बहुत कुछ सीखा और पाया है। उनके उपकार से मैं कभी उऋण नहीं हो सकता। मेरी यही एक अभिलाषा है कि जिनेन्द्र देव की अनुकम्पा से मुझमें इतनी शक्ति बनी रहे कि मैं अन्तिम श्वास तक धर्म व समाज की कुछ न कुछ सेवा कर सकूं तथा यदि मेरे किसी सुकृत्य के फलस्वरूप मुझे पुनः नरभव प्राप्त हो तो मेरा जन्म जैन धर्म व जैन समाज में ही हो।"

श्री अजित प्रसाद जी जैसे व्यक्तित्व को खोना जैन समाज से अमूल्य रत्न छिन जाना है। आपने जीवनकाल में साहित्य एवं समाज की जो अनवरत सेवा की है उससे साहित्य वर्ग एवं समाज वर्ग कभी उऋण नहीं हो सकता। समाज पत्रिकाओं में उनके स्वर्गवास पर खेद प्रकट करने तक अपनी श्रद्धांजलि सीमित न रखे वरन् उनके द्वारा साहित्य के क्षेत्र में दिए गए योगदान को प्रकाशित करवाकर ही इतने बड़े व्यक्तित्व को एक छोटी सी श्रद्धांजलि दे सकता है। समाज की ओर से यही एक सच्ची श्रद्धांजलि होगी जिससे आने वाली पीढ़ी उनके व्यक्तित्व एवं वृहद् कृतित्व से प्रेरणा ले सकेगी।

वीर सेवा मंदिर से प्रकाशित **'अनेकान्त'** पत्रिका में भी आपके तथ्यपरक आगम सम्मत दार्शनिक एवं पुरातात्त्विक लेख छपते रहे हैं। आपके कठिन परिश्रम एवं निर्भीकता से लिखे गऐ ये लेख शोध विद्यार्थियों एवं दर्शन, पुरातत्त्व के जिज्ञासुओं को दिशाबोध प्रदान करने वाले हैं।

वीर सेवा मंदिर परिवार इस महान् व्यक्तित्व के दिवंगत होने पर स्तब्ध है। श्री अजित प्रसाद जी द्वारा जैन धर्म, जैन समाज को दिए गए योगदान को नमन करता है। आशा है कि श्री रमा कान्त जी, डॉ शशि कान्त जी आपके द्वारा किए गए कार्यों को गति प्रदान करेंगे।

- वीर सेवा मंदिर, नई दिल्ली

पुरानी पीढ़ी के ज्योतिपुंज श्री अजित प्रसाद जैन

- श्री शिवचरन लाल जैन

बाबू अजित प्रसाद जी जैन समाज रूपी आकाश के दमकते नक्षत्र थे। अविरल, अथकित एवं जुझारू रूप में उन्होंने अपनी ज्ञानाराधना के दीपक को समाज के अन्धकार के निवारण हेतु सदैव यावज्जीवन जलाए रखा था।

मुझे सर्वप्रथम उनके दर्शन का सौभाग्य सन् १९७७ के लगभग हस्तिनापुर जम्बूद्वीप में मिला। उनकी स्पष्टवादिता व उद्‌बोधक वात्सल्य अभी तक मेरे मानस पटल पर अंकित है। वे स्वस्थ पत्रकारिता के मानदण्ड माने जाते हैं। 'जैन गज़ट' के पूर्व सम्पादक एवं व्यवस्थापक के रूप में उन्होंने पत्रकारिता के अग्रदूत का दायित्व निर्वहण किया था। अनेक बार की भेंट मेरे लिए उत्प्रेरक रही है। चारबाग धर्मशाला में प. पू. मुनि श्री सौरभ सागर एवं श्री प्रबल सागर जी महाराज के सान्निध्य में लगभग ३ वर्ष पूर्व सम्पन्न संगोष्ठी में मुझे सम्मिलित होने का सुयोग प्राप्त हुआ। वहाँ बाबू जी ने बड़े आत्मीय वात्सल्य के साथ श्री भगवान महावीर स्मृति केन्द्र का अवलोकन कराकर बड़ा उपकार किया। उनके द्वारा प्रदत्त ग्रन्थ आज भी मेरे लिए स्मारक के रूप में विराजमान है।

उनका पूरा परिवार ही ज्ञानात्मक एवं स्वस्थ आलोचना व समीक्षा के कार्य में अग्रणी रहा है। उनके अग्रज इतिहास के शिखर पुरुष डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन ख्यातिप्राप्त मनीषी थे। आज भी श्री रमा कान्त जी व डॉ. शशि कान्त जी उनके पूर्व स्थापित ज्ञानायतनों का उपयोग कर **'शोधादर्श'** आदि के माध्यम से समाज की सुप्त चेतना को झंकृत करने का महत्कार्य संपादित कर रहे हैं।

बाबू अजित प्रसाद जी ने लगभग ८८ वर्ष तक ज्ञानात्मक तपश्चरण किया। उन्हें महामना महर्षि दधीचि के रूप में स्थापित किया जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनका अभाव समाज को सदैव खटकता रहेगा।

उन्हें हृदय के अंतरतम से श्रद्धापूर्वक नमन। उन स्वर्गवासी आत्मा को स्वर्ग में भी सदैव शान्तिमय ज्ञानोपयोग का लाभ रहे, यह शुभकामना है।

- सीताराम मार्केट, मैनपुरी

अजित आए और अजित होकर चले गए

- डॉ. अभय प्रकाश जैन

समय चक्र का कोई अतिक्रमण ,नहीं कर पाया। परिवर्तन नियति और प्रकृति का अनवरत क्रम है। भोक्ता और दृष्टा को इसकी सहज प्रतीति नहीं होती। जीवन लेकर प्राणी आता है और जीवन पूरा करके महायात्रा पर चला जाता है। लेकिन अपनी यादें पीछे छोड़ जाता है। जैसे पानी के बीच रहकर भी तेल जुदा रहता है वैसा उनका जीवन होता है तथा वे परम भेदविज्ञानी कहे जा सकते हैं। अजित प्रसाद जैन बहुत साफ सुथरे व्यक्तित्व के धनी थे। वे ऐसे लेखक और संपादक नहीं थे जिनके भीतर दिन रात कोई न कोई गोरखधंधा चला करता है और जो किसी दुर्गम किले की तरह अभेद्य बने रहते हैं- बने रहने में अपनी शान समझते हैं। अजित प्रसाद जैसा नाम था वैसा ही उनका व्यक्तित्व भी अजेय था। वे प्रशासक रहे, किन्तु निष्कलंक/निष्पंक कभी कोई स्थिति उन्हें कलंकित नहीं कर सकतीं। उन्हें साधारण से साधारण जन से लेकर विशिष्ट तक सब एक जैसा प्यार करते थे-अच्छे-अच्छे दिग्गज नौकरशाह भी उनके प्रशंसक थे। वे हरसिंगार की तरह खुशियां बिखेरते रहते थे। उनकी पैनी कलम का सभी लोहा मानते हैं।

पत्रकारिता एक चमत्कार है और **'शोधादर्श'** जैसी अच्छी पत्रिका तो चमत्कारों का भी एक चमत्कार है जो सामाजिक कुशल मंगल की पहरेदार है और बिना कारण हमला नहीं बोलती न ही अफवाहों पर निगाह देती है न ही अतिशयोक्तियां न कटूक्तियां न ही मिर्च मसाला न ही सनसनीखेज व्यूह रचना। जिसकी नींव कमजोर होती है उसे भय रहता है लेकिन **शोधादर्श** को जो रोशनी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने प्रदान की थी उसी मशाल को लेकर अजित प्रसाद जी अपने अन्तिम सतय तक चलते रहे। **'शोधादर्श'** के कलेजे में ज़हर और अमृत दोनों एक साथ धड़कते हैं, वह सवाल उठाता है तो समाधान भी देता रहा है। अन्याय के आगे और शिथिलाचार के आगे चुप बने रहना एक संगीन जुर्म है। जब कोई समाज अपनी पहचान खोने लगता है तो पत्रकार ही समाज को आंखें प्रदान करता है और कभी-कभी आंखों में अंजन भी आंजता है। विविधता के वियावान जंगल में जैनत्व की पहचान को कवच पहिनाए रखना आज बहुत कठिन हो गया है। **शोधादर्श** के संपादक ने वह सभी कुछ किया है जो उसे अनिवार्यतः करना चाहिए था। यही उनकी आदत और इबादत थी।

हिसाब किताब हम दुनिया का प्रतिपल करते हैं लेकिन हमारे दैनिक जीवन का हिसाब किताब कौन करेगा? सामाजिक कराहटों के बीच, चारों ओर संकटों के बीच अभिशाप फन उठाकर खड़े हुए है। समाज चारों ओर लपटों से झुलस रहा है-जो लोग संकट की भाषा को समझते हैं वे ही विवेक की लिपि को शब्द प्रदान करते हैं। **शोधादर्श** का यही आत्मगौरव है। अजित प्रसाद जी ने कभी हार नहीं मानी। उज्ज्वल संभावनाऐं सदैव उनके सामने रहती थीं। वे कहते थे "अज्ञान-प्रदर्शन अभिशाप है, ज्ञान शुभाशीष है, विवेक जीवन है। जीवन एक तीर्थ है।"

अजित प्रसाद जैन अब हमारे बीच नहीं हैं- यह यकीन नहीं आता। उनके पत्र मेरे निजी संग्रह में हैं। वे मुझसे बोलते बतियाते हैं। संकट के दिनों में लोग हिल जाते हैं लेकिन वे संकटों को पुरस्कार मानते रहे। उन्होंने अपने आंखों के तारे अपने सामने ही टूटते बिखरते देखे फिर भी वे अटूट अखंड बने रहे और अपने कर्तव्य के ललाट पर सफलताओं के चंदनतदुंल सज्जित करते रहे। उनके जीवन के रहस्य को बहुत कम लोग समझते हैं। उन्होंने संकटों को शाप नहीं अपितु शुभाशीष माना, दौलत और नेमत माना। उन्होंने सत्य के प्रयोग किए और सत्य को ही जीवन बनाया और सत्य के अक्षरों को कपड़े पहनाकर सबके सामने रूबरू किया था।

पिछले ३५ साल से इस परिवार से मेरे सम्बन्ध हैं। मैंने आँखें खोलकर प्रत्येक सदस्य को देखा समझा है। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के परिवार का हर सदस्य कहता है-

न सिर झुका जियो और न मुंह छिपाके जियो
ग़मों का दौर भी आये तो मुस्कराके जियो।।

मैं देखता हूं-अच्छी ताकतों और अच्छे लोगों ने जैन जन जीवन को बेहतर बनाने के लिए कड़ा संघर्ष किया है। अजित प्रसाद जैन एक दिशासूचक थे जिसने हमें दिशा दी है, संदेश और प्रेरणा दी है। हमारा शरीर तो प्रकृति का महान उपकार है। इसे यदि समाज सेवा का, साधना का मंदिर माना जाय, साफ स्वस्थ रखा जाये, यथाशक्ति समाज हित के काम किए जायें तो मुक्ति के लिए, कर्म-निर्जरा के लिए पांव-पांव विहार करने की, पलायन की, पराश्रित रहने की आवश्यकता ही न रहे। मुक्ति तो हाथ में धरी है। हमारे प्रणम्य साधुवर्ग को प्रेरणाओं का अभियान चलाना पड़ेगा। वे ही सामाजिक विषमताओं में समन्वय लाने में सेतु का काम कर सकते हैं।

अजित प्रसाद जैन मुनि नहीं थे लेकिन उनका दैनिक जीवन किसी मुनि से कम

नहीं था। उन्हें वस्त्रधारी मुनि कहा जा सकता है। वयोवृद्ध होने के कारण आँखें जवाब दे गयी थीं फिर भी वे निरंतर स्वाध्याय और लेखनी को गति देते रहते थे। अपने जीवनकाल में ही अपने होनहार पुत्रों का वियोग देखा फिर भी कर्मयोगी की भांति मौलिकताओं को उद्घाटित करने में कमर कसे रहे। **शोधादर्श** के पाठक अब हताश हो गए हैं। अजित प्रसाद जी उसकी आत्मा थे। पाठक सबसे पहले उनके चिंतन कण पढ़ता था और उनकी मुक्त कंठ से भूरिभूरि प्रशंसा करता था। स्वाधीनता और स्वाधीन चिंतन उनकी विविशष्टता थी। नाथूराम प्रेमी, डॉ. नेमीचंद जैन के समकालीन चिंतन को वे **शोधादर्श** के माध्यम से निर्भय होकर उजागर करते रहे। उनकी पत्रकारिता सकारात्मक थी। वे कभी निराश हताश होकर नकारात्मक नहीं हुए। उनकी चोट सदैव 'विवेक' पर रहती थी–यही उनका अप्रमत्त कर्तव्य रहा है।

अजित प्रसाद जैन इस संसार में अजित नाम लेकर आए और मृत्युंजयी होकर 'अजित' बनकर चले गए। वे कभी विरोधाभासी नहीं रहे। समाज के सभी पक्ष उन्हें लाजवाब कहते थे। वे सबको ही अपनी मेधा से निरुत्तर कर देते थे। उनकी बौद्धिक क्षमता के दर्शन तथा व्यक्तित्व की चित्त शुद्धि **'शोधादर्श'** के माध्यम से समूची समाज में खुशबू की तरह महकती रही। वे उनके युगान्तर प्रयास कहे जा सकते हैं। मृत्यु के प्रति उनका स्वयं का अविचलविश्वास और मृत्यु से पूर्व की तैयारी उन्होंने पहले ही कर ली थी। वे अब हमारे बीच नही हैं लेकिन उनकी अक्षरदेह हमारे सामने खिलखिलाती हुई खड़ी है। उनके लेखन को अब पुस्तकाकार स्वरूप मिलना चाहिए ताकि समाज के सामने रसीदी टिकिट लगी हुई सनद बनी रहे। उनकी तेजस्वी उर्जा ने समाज के पुनर्निर्माण में आहुति का काम किया है। उसे कैसे चिरंजीवी बनाया जाय, इस पर विमर्श जरूरी है। उनके स्मृति ग्रंथ की तैयारी उनके परिवार तथा उनके बौद्धिक परिवार को आगे बढ़कर अनिवार्यतः करनी चाहिए। उनका लेखन महकता पराग है इसे पुस्तकाकार आना चाहिए ताकि आगामी पीढ़ी ऐसे चिंतन के बीजों को अपने घर के आंगन में उगाऐं ताकि हमारा सामाजिक राष्ट्रीय चरित्र उज्ज्वल बन सके।

–एन १४, चेतकपुरी, ग्वालियर

एक निष्पक्ष निर्भीक पत्रकार का दुखद निधन

- डॉ. राजाराम जैन (प्रधान सम्पादक : जैन सन्देश)

यह जानकर हमें अत्यन्त दुख हुआ कि बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी श्रद्धेय अजित प्रसाद जी जैन, लखनऊ का २५ जून, २००५ को दुखद निधन हो गया। उनकी वृद्धावस्था को देखते हुए उनकी मृत्यु को अचानक या अप्रत्याशित नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जैसा कि मुझे विदित हुआ है कि वे ८८ वें वर्ष में चल रहे थे।

उनके द्वारा सम्पादित **शोधादर्श** पत्रिका में उनके द्वारा लिखित, सम्पादित और समीक्षित सामग्री को पढ़कर मैं उनकी लेखनी की जीवन्तता, निर्भीकता एवं निष्पक्षता से इतना प्रभावित था कि उसे देखकर मैं यही धारणा बनाए हुए था कि वे अभी ६०-६५ वर्ष के वृद्ध युवा होंगे। यह इसलिए कि मैंने २००२ के पूर्व उनके साक्षात् दर्शन नहीं किए थे, यद्यपि पिछले लगभग तीन चार दशकों से पत्राचार के माध्यम से उनसे चिर परिचित जैसा अवश्य हो गया था। विशेष पत्राचार उनसे उस समय हुआ था जब उनके अथक प्रयत्नों से उत्तर प्रदेश सरकार ने लखनऊ में संस्कृत अकादमी की स्थापना की थी और उन्हें भी उसका मानद कोषाध्यक्ष बनाया गया था। उस समय मैंने उनसे यह विशेष प्रार्थना की थी कि उनके प्रयत्नों से संस्कृत अकादमी के समान ही प्राकृत अकादमी की स्थापना भी होनी चाहिए। साथ ही संस्कृत अकादमी में भी प्राकृत साहित्य संबंधी शोध कार्य की व्यवस्था की जानी चाहिए। संभवतः उनके प्रयत्नों से प्राकृत अकादमी की स्थापना की रूपरेखा तैयार भी हो चुकी थी और मुझे भी उसका एक सदस्य मनोनीत किया गया था। उसके बाद ही अजित प्रसाद जी प्रशासनिक सेवा कार्य से रिटायर हो गये। यह दुर्भाग्य ही रहा। वर्तमान में संस्कृत अकादमी तो कार्यरत है, किन्तु प्राकृत अकादमी का क्या हुआ इसका पता नहीं चल सका।

नवम्बर २००२ में यूनिवर्सिटी ग्रांट कमीशन की ओर से लखनऊ विश्वविद्यालय की नौवीं पंचवर्षीय योजना की समीक्षा हेतु गठित समिति के लिए मनोनीत एक सदस्य के रूप में मुझे लखनऊ जाने का सुअवसर मिला। उसी समय अवसर निकालकर उनसे मिलने उनके आवास पारस सदन, आर्यनगर पहुंचा। मुझे देखकर वे भाव विभोर हो उठे। उनके साथ मैं भी आनन्दातिरेक में इतना डूबा कि एक दो मिनट तक तो

वार्तालाप ही नहीं हो सका। हम लोग केवल एक दूसरे को देखते ही रहे। बाद में कुशल क्षेम के बाद अनेक विषयों पर वार्तालाप प्रारंभ हुआ।

उनका बिस्तर पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं और फाइलों से भरा पड़ा था। मानो वे भी अब उनके जीवन के अभिभाज्य अंग बन गये थे। उस समय उनका अधिकांश लेखन कार्य बिस्तर में ही होता था, लेटकर या उकडू बैठकर। यद्यपि शारीरिक दृष्टि से वे शिथिल अवश्य हो गये थे, फिर भी उनके नियमित लेखन-सम्पादन कार्य में शैथिल्य नहीं देखा गया।

जैन मुनियों के चर्या शैथिल्य पर **समन्वय वाणी**, जयपुर में लिखित उनका प्रधान सम्पादकीय इतना यथार्थ एवं नुकीला था कि वह लम्बे समय तक चर्चा का विषय बना रहा। वह निबन्ध भी उकडू बैठकर अत्यन्त व्यथित हृदय से ही लिखा गया था। उनका यह रूप देखकर मुझे अपने पूज्य गुरुवर प्रो. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल (बी. एच.यू.) का वह रूप स्मरण हो आया जब शारीरिक शैथिल्य के कारण उन्हें बैठने में कठिनाई होने लगी थी। अतः उन्होंने रुग्ण-शैया पर लेटे-लेटे ही 'मारकण्डेय पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन' नामक बहुमूल्य अद्भुत ग्रन्थ तैयार किया था।

श्रद्धेय अजित प्रसाद जी पारिवारिक घोर संकटों से गुजर चुके थे। पहिले पत्नी का स्वर्गवास तत्पश्चात् दो कर्मठ पुत्रों का स्वर्गवास। इतनी निर्मम विषम परिस्थितियों की कठोर प्रताड़ना में भी उन्होंने अपना मानसिक संतुलन नहीं खोया और अपनी सरस्वती सेवा का अखण्ड दीप प्रज्जवलित बनाए रखा। जैन समाज में ऐसे उदाहरण कम ही मिल सकेंगे।

एक प्रसंग मैं भूल नहीं पा रहा हूं। अपने गुरुजनों के आदेश से मैंने सन् १९९८ में अ.भा. दि. जैन विद्वत्परिषद् के अध्यक्ष पद के लिए चुनाव लड़ा था। उस समय किन्हीं अदृश्य कारणों से मेरे कई अपने मित्र ही पराए हो गये थे, फिर भी अपरिचित दूरदर्शी अनेक विद्वान मित्रों ने मेरी सफलता के लिए अग्रिम बधाइयां भी भेजना प्रारंभ कर दिया था और उनके सहयोग से मैं बहुमत से अध्यक्ष पद के लिए निर्वाचित भी हो गया था। उस समय मुझे यह विश्वास नहीं था कि विद्वत्परिषद् के चुनाव पर अजित प्रसाद जी अपने **'शोधादर्श'** में कोई टिप्पणी लिखेंगे। लेकिन मुझे उस समय बड़ी प्रसन्नता हुई, जब मैंने देखा कि **'शोधादर्श'** में उन्होने मेरी प्रशंसा में उत्साहवर्धक टिप्पणी लिखी और विद्वत्परिषद् में कुछ समय पूर्व से जो दलगत उथल पुथल मची चली

आ रही थी, उस पर उन्होंने अपनी निष्पक्ष एवं निर्भीक समीक्षात्मक टिप्पणी भी लिखी थी।

उनका हृदय विशाल था। समाज के नवनिर्माण के लिए उन्होंने जो-जो योजनाएं सोच रखी थीं तथा नवीन पीढ़ी को जागरूक बनाने के लिए उन्होंने जो योजनाएं मन में संजो रखी थीं, भले ही उन्हें वे पूर्ण न कर सके हों, फिर भी वे जो अधिक से अधिक कर सकते थे, समर्पित भाव से जीवन पर्यन्त किया।

वे एक निष्पक्ष इतिहासकार, निर्भीक पत्रकार, सम्पादक, आलोचक, लेखक एवं अच्छे प्रशासक थे। इनके अतिरिक्त भी वे एक चरित्रनिष्ठ सद्गृहस्थ भी थे। 'गुणिषु प्रमोदम्' के वे आदर्श प्रतीक थे। अपने युग के वे अग्रणी विचारक विद्वान थे। उनके निधन से निस्सन्देह ही जैन पत्रकारिता के एक महत्वपूर्ण अध्याय पर पूर्ण विराम सा लग गया है। उनका परिवार तो विद्वत् परम्परा का एक अनोखा संघ था। इतिहास मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जी उनके ज्येष्ठ भ्राता थे। उनके परिवार के ही डॉ. शशि कान्त एवं रमा कान्त, जो कि स्वयं सुप्रसिद्ध लेखक, इतिहासकार एवं निर्भीक पत्रकार हैं, उनकी आदर्श परम्पराओं को आगे बढ़ाते रहेंगे, ऐसा पूर्ण विश्वास है।

- नोएडा (उ.प्र.)

इन्द्रादिभिः क्षीरसमुद्र-तोयैः संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः।
यः कामजेता जन-सौख्यकारी तं शुद्ध-भावादजितं नमामि।।

अज्ञातकर्तृक **स्वयम्भू स्तोत्र** से

भावार्थ- इन्द्रादिकों द्वारा क्षीरसमुद्र के जल से मेरु पर्वत पर जिनेन्द्रदेव का अभिषेक किया गया, जो काम को जीतने वाले और प्राणीमात्र को सुख प्रदान करने वाले हैं, उन अजितनाथ जिनेन्द्र को मैं शुद्ध भावों से नमस्कार करता हूँ।

अपराजेय व्यक्तित्व : श्री अजित प्रसाद जी जैन

- डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल

पत्रकारिता असिधार पर चलने जैसा है। एक व्यक्तित्व ऐसा होता है जो अपने अस्थिर, अनिश्चित, अनैतिक एवं पक्षपातपूर्ण सोच के कारण अपने जीवन काल में ही मृत्यु-समान निस्तेज स्वयं तक से उपेक्षित हो जाता है; दूसरा व्यक्तित्व ऐसा होता है जो अपने स्थिर, निश्चित, नैतिक एवं निष्पक्ष-निर्भीक सोच के कारण मृत्यु उपरांत भी प्रकाश स्तंभ जैसा समाज को मार्गदर्शक- प्रेरक बना रहता है। उनके नाम की कीर्ति के लिए जीवन और मृत्यु दोनों समान होते हैं। ऐसा ही पत्रकारिता जगत का एक विराट व्यक्तित्व था-श्री अजित प्रसाद जैन, लखनऊ जो २५ जून, ०५ को अनंत में विलीन होकर भी अंतहीन सिद्ध हुआ। श्री अजित प्रसाद जैन **शोधादर्श**, चातुर्मासिक एवं **समन्वयवाणी** पाक्षिक के प्रधान सम्पादक थे। वे कुशल प्रशासक, समर्पित समाजसेवी एवं निस्पृही-पक्षपात रहित कुशल पत्रकार-सम्पादक थे। वे किसी संस्था व्यक्ति या मत विशेष को समर्पित नहीं थे और न वे किसी के पैरोकार थे। उनका व्यक्तित्व विराट था। आगम उनकी दृष्टि थी। विवेक उनका सहचर था। आगम और विवेक की कसौटी पर वे प्रत्येक घटना को कसते थे और सारभूत रहस्य निकालकर प्रस्तुत कर देते थे। तटस्थता उनकी विशिष्ट पूंजी थी। शिथिलाचार, व्यभिचार, आगम के प्रतिकूल कुटकाचार, समाज विग्रह आदि कोई भी कटु विषय क्यों न हो वे कटु आलोचक/समीक्षक के रूप में प्रकट होकर भी विनम्रता, विनय में कभी संकोच नहीं करते थे। पद की मर्यादा के अनुसार सम्मानित शब्दों के सम्बोधन की सहृदयता-विनम्रता उनका वह निजी गुण था जो विषय के ऊपर उठकर प्रवाह में सहज तैरने की शक्ति देता था। बौद्धिक पैनापन और हृदय की निर्मलता का सुयोग किसी भी पत्रकार को शारीरिक व्याधियों से निरपेक्ष, महान बना देती है। यह सुयोग श्री अजित प्रसाद जी जैन को सहज ही प्राप्त हुआ था। वे हृदयरोग, मधुमेह, दृष्टिमंदता एवं श्रवण-मंदता के रोगों से पीड़ित होते हुए भी जीवन के अंतिमक्षणों तक स्वाध्याय, समीक्षा एवं सम्पादन के कार्य से जुड़े रहे। ऐसी जीवन्तता आत्म-शक्ति के वैभव के अनुभव के साथ ही मिलती है।

व्यक्ति की कार्यकुशलता, विश्वसनीयता, प्रामाणिकता और ईमानदारी आदि ऐसे तत्व हैं जो उसे जहां भी प्रतिष्ठित कर दो वह उस पद को गरिमामंडित बना देता है। संस्था का पद नहीं, उस पर प्रतिष्ठित व्यक्ति का व्यक्तित्व ही उसे गरिमामय/हीन बना देता है। यही चरितार्थ हुआ श्री अजित प्रसाद जी जैन के साथ। महासभा का प्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र **जैन गज़ट,** जो अब विवादित है पहले अजमेर से प्रकाशित होता था,

जिसका प्रकाशन परिस्थितियों के संदर्भ में बंद हो गया था। उसे पुनर्जीवन देने का श्रेय आपको है। सन् १९८१ में आप **जैन गज़ट** को अजमेर से लखनऊ लाये और उसका प्रकाशन प्रारम्भ किया। सन् १९८८ तक आप उसके प्रकाशक व समाचार-सम्पादक रहे। इनकी प्रतिभा का प्रकाश हटते ही कालान्तर में **जैन गज़ट** समाज-विग्रह, शिथिलाचार पोषण आदि विकृतियों का प्रतीक बनकर उभरा। प्रकाशक एवं सम्पादक महोदय अपने-अपवने हितों का राग अपने ढंग से अलापते रहे और अंत में एक क्षण ऐसा आया जब दोहरे-व्यक्तित्व के धनी सम्पादक महोदय को उपेक्षित-जैसा पद त्यागकर समाज को अपना स्पष्टीकरण देना पड़ा। यह है दो व्यक्तित्वों का अंतर जो उनकी अंतरंग निर्मल परिणति के स्तर को अभिव्यक्त करता है।

कुशल प्रशासक के अलावा प्रारम्भ से ही आपकी अभिरुचि समाज एवं धर्म के क्षेत्र में रही। इस कारण आप विविध पत्र-पत्रिकाओं में समर्थ-निर्भीक-सम्पादक, उन्मुक्त विचारक एवं मार्गदर्शक के रूप में प्रसिद्ध हुए। आप स्वयं शोधपरक चिंतक एवं लेखक, समीक्षक तो थे ही अपनी पत्रिका के लेखकों के साथ भी उनका सीधा सम्वाद था। लेख की समीक्षा करना और विषय सामग्री विषयक सुझाव देना उनकी विशिष्ट विशेषता थी। पत्रिका में प्रकाशित लेख की विषय सामग्री से उनका भावात्मक सम्बंध हो जाता था। प्रत्येक पत्र का उत्तर देना उनकी आदत में था। रुग्ण शैय्या पर उन्होंने २-३ पेज तक के पत्रोत्तर २-३ किस्तों में लिखकर अपना कर्तव्य निर्वाह किया। ऐसे जीवट के व्यक्तित्व विरल ही होते हैं। प्रकरण भ. महावीर की जन्मभूमि वासोकुण्ड-वैशाली के अनुचित रूप से अपहरण का था। आपने नालंदा-कुण्डलपुर समर्थकों के आलेखों का साधार, सतर्क प्रतिकार किया, साथ ही वासोकुण्ड की आगम आधारित सिद्धि भी की। अपने द्वारा सम्पादित **शोधादर्श** के अंतिम ५५वें अंक में आपने डॉ. सागरमल जैन द्वारा लिखित आलेख 'भ. महावीर का जन्म स्थल : एक पुनर्विचार' प्रकाशित कर वासोकुण्ड-वैशाली के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की।

व्यक्ति निजी पत्राचार में मुखर हो जाता है। इससे उसके अंतरतम के बेदाग विचारों/अनुभूतियों का पता चलता है। आइये देखिये कुछ नमूने-

१. पत्र दि. ११.८.०२- आपने भ. महावीर जन्म स्थली संबंधी हमारे लेखों की प्रशंसा की। धन्यवाद। हमें तो प्राचार्य जी जैसे समझदार विद्वानों की मानसिकता पर दुख होता है जो कुतर्कों के सहारे नालन्दा जिले के कुण्डलपुर को सही जन्म स्थल प्रमाणित करने में अपनी विद्वत्ता का प्रदर्शन कर रहे हैं- केवल इसलिए कि कोई आर्यिकाजी की अनुकम्पा उन पर बनी रहे।

२. पत्र दि. २०.११.०२- गणिनी आ. ज्ञानमती, प्रज्ञाश्रमणी चन्दनाजी या प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जी के कुण्डलपुर (नालंदा) के पक्ष में दिए गए तर्क तर्क कम कुतर्क अधिक हैं जिनकी किसी भी तटस्थ विद्वान से अपेक्षा नहीं की जाती। आपने अपने आलेख में उनका सुन्दर विश्लेषण किया है।

मेरे जीवन में प्रेरणास्पद होने जैसी कोई बात नहीं है। यह अनेक असफलताओं से भरा है।--समता भाव की प्राप्ति तो परमसिद्ध है फिर सुख-दुख की कोई अनुभति ही नहीं हो। हां प्रयास तो कर ही सकते हैं। स्नेह बनाए रखें। दृष्टि मंदता के कारण इस जीवन का अब पूरा उपयोग नहीं कर पाता।

३. पत्र दि० २२.२.०३- आपका पत्र दि. २१/२ प्राप्त हुआ। स्वास्थ्य धीरे-धीरे ठीक हो रहा है- - दृष्टिमंदता बहुत बढ़ गई है। आपके पूज्य पिताजी के स्वर्गवास का समाचार अखिल बंसल ने टेलीफोन पर बताया था। श्री जिनेन्द्र भगवान से प्रार्थना है कि ऐसे पुण्यशाली धर्मनिष्ठ जीव का निकट भविष्य में ही भवसागर पार हो।

कुण्डलपुर के विषय में आपका अद्यतन लेख **वीर** (११ फरवरी) में पढ़ा। इसके पूर्व भी इस विषय पर प्रकाशित आपके लेख पढ़े हैं। उत्तम हैं। खोजपूर्ण हैं। --आर्यिका ज्ञानमती जी निहित स्वार्थवश ही दुराग्रह से तथ्यों को तोड़ मरोड़ कर नालंदा के कुण्डलपुर का प्रचार कर रही हैं।/करवा रही हैं।

४. पत्र दि ३.१२.०२- आपका पत्र दि. २८.११.०२ आज ही प्राप्त हुआ। कुण्डलपुर पर आपका लेख सचमुच ही श्रेष्ठ प्रस्तुति है पर हमारे साधु संतों ने तो सारे ज्ञान का ठेका स्वयं ही ले रखा है तथा अपनी धारणा के विरुद्ध कोई तर्क उन्हें प्रभावित नहीं करता। सबसे बड़ी विडम्बना तो यह है कि हमारे अनेक विद्वान उनसे उपकृत होकर या उपकृत होने की प्रत्याशा में तर्क-कुतर्क के द्वारा उन्हीं के पक्ष का जोर शोर से पिष्ट-पेषण करते हैं।

५. पत्र दि. २८.१.०४- आपका कृपा पत्र दि. १३/१ प्राप्त हुआ। आपने गणिनी आ. ज्ञानमती के विषय में लिखा है वह तथ्यों पर आधारित है, सही है। वे धर्म को व्यापार का अर्थार्जन का साधन बनाने में निपुण हैं। सत्य की परिभाषा भी कदाचित् उन्होंने अपनी सुविधानुसार परिवर्तित कर ली है तथा गौविल्स (हिटलर के सहायक) के इस वाक्य को कि "अपनी मिथ्या बात को इस तरह प्रस्तुत करो, उसका इतना प्रचार करो कि उसके आगे सत्य ही मिथ्या लगने लगे" चरितार्थ कर दिया है। कुछ तो उनका तथा प्रज्ञाश्रमणी चन्दना जी (गणिनी जी की गणधरा) का अध्ययन कदाचित् दिगम्बर जैन शास्त्रों तक ही सीमित रहने के कारण सामान्य ज्ञान के प्रति उनकी अनभिज्ञता है।

उदाहरण के लिये चन्दना जी इसी बात पर बिदक गई कि भगवान महावीर की जन्म नगरी कुण्डलपुर तो एक अति ऐश्वर्यशाली महानगरी थी, उसे किसी ने गांव (कुण्डग्राम) क्यों कहा।

माता जी दिगम्बर जैन आगमों की गहन अध्येता हैं। अतः ये तो वह जानती ही होंगी कि मायाचार से साधु को कौन गति का बन्ध होता है, फिर भी यदि वे वैसी ही प्रवृत्ति करती हैं तो इसके तो यही अर्थ होते हैं कि उन्हें शास्त्र कथन पर अंतरंग में विश्वास नहीं है।

३.१२.०३ को पड़े हार्ट अटेक (एक ही वर्ष में दूसरी बार) के बाद अभी तक स्वास्थ नारमल नहीं हो पाया। दृष्टिमंदता तो बहुत बढ़ गयी है। यह पत्र बेड पर लेटे लेटे तीन चार किस्तों में लिख पाया हूं।

नव वर्ष आपको व आपके परिवार को सर्व मंगलमय सिद्ध हो। स्नेह बनाए रखें।

६. पत्र दि. १०.३.०४- आपका २७/२ का पत्र प्राप्त हुआ तथा आपकी वैशाली-वासोकुण्ड की यात्रा का सविस्तार वर्णन पढ़ा। हम तो प्रारंभ से ही कुडग्रामपुर कुंडगाम-कुंडलपुर को वैशाली का ही कोई सवर्वन टाउन-बस्ती मानते आ रहे हैं।--पर यह समझ में नहीं आता कि कुंडग्राम या क्षत्रियकुंड से वासोकुण्ड नाम कैसे पड़ा? क्या वासोकुण्ड में आज भी कोई ताल-पोखर-पुष्करिणी है?

७. पत्र दि. १८.७.०४- प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश ने आपके **समन्वयवाणी** में प्रकाशित लेख "वैशाली के लोकजीवन में महावीर का प्रभाव एक सर्वेक्षण" की प्रतिक्रिया स्वरूप 'अनर्गल प्रलाप क्यों?' शीर्षक से अपने लेख में बड़ी व्यंगात्मक तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है तथा उसे अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराया है। आशा है आप उसका उपयुक्त उत्तर **समन्वय वाणी** में प्रकाशित कराएंगे। हमारी धारणा है कि प्राचार्य जी को माताजी की स्वयं की संस्था या उनकी जेबी संस्थाओं- भ. ऋषभदेव विद्वत् महासंघ या डॉ. अनुपम जी की कुंदकुंद ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत किया जा चुका है।

८. पत्र दि. १/६/०४- मैंने **समन्वय वाणी**, अगस्त- II में आपका तथा शशि कान्त का लेख दोनों पढ़े। नरेन्द्र प्रकाश जी को सटीक उत्तर दिया गया है। बधाई ! हमें नहीं लगता कि आगे वे इस विषय पर कोई प्रति उत्तर देंगे।

धर्म, संस्कृति एवं समाज के जागरूक प्रहरी के रूप में श्री अजित प्रसाद जी सदैव "यदि तोर डांक सुने केऊ न आसे तवै एकला चलो" के अनुगामी रहे। प्रकरण चाहे गणिनी जी द्वारा अयोध्या के रायगंज के १३ पंथी-शुद्धाम्नायी मंदिर के २० पंथी में बदलने का हो या 'कुन्दकुदाद्यो' के स्थान पर 'पुष्पदंताद्यो' का हो, या शिथिलाचार का हो, आपने अपनी सशक्त लेखनी से आगम सम्मत बात कही। यह बात पृथक् है कि अपरपक्ष ने उस पर गौर नहीं किया जिसकी परिणति इतर-समाज द्वारा हमारी विधिसंगत बातों की

अवहेलना करना है। आखिर बीज की प्रकृति के अनुसार ही तो फल प्राप्त होते हैं। जिनदीक्षाधारियों एवं समाज में सत्य और तथ्य को स्वीकार कर सद्प्रवृत्ति करने की भावना का अभाव हो गया/हो रहा है जिससे धर्म के नाम पर वह सब हो रहा है जो कदाचित् गृहस्थ अवस्था में भी उपयुक्त नहीं माना जाता। सत्याग्रह तभी सफल होता है जब अपर पक्ष नैतिक और सहिष्णु हो, रिस्पोंसिव हो, सम्वेदनशील हों। स्वतंत्रता संग्राम की सफलता का रहस्य अंग्रेजों के इन गुणों में निहित है। सत्य की स्वीकृति का साहस और सत्य स्वीकार करवाने की शक्ति, सामर्थ्य इन दोनों के अभाव के कारण ही संस्कृति/समाज पतनोन्मुखी है। सत्य के उद्घाटन के बाद भी असत्य का सिक्का चल रहा है। सत्य के उद्घाटकों एवं श्री अजित प्रसादजी को सत्य-उद्घाटक एक अपराजेय व्यक्तित्व के रूप में सदैव स्मृत किया जाता रहेगा। विषम परिस्थितियों में सत्य का उद्घाटन भी अनेक आपत्ति-विपत्तियों का कारण होने से सामान्य जन अब परिस्थितियों की उपेक्षा करने लगे हैं, टालने लगे हैं? विकास की दृष्टि से यह अशुभ चिन्ह है।

श्री अजित प्रसादजी ने सेवानिवृत होते ही शोध, सहायता एवं पत्र प्रकाशन हेतु सन् १९७६ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति की स्थापना की। वे उसके संस्थापक महामंत्री बने। इस समिति द्वारा शोध पुस्तकालय, तीर्थंकर छात्र सहायता कोष, महावीर जन कल्याण निधि एवं **शोधादर्श** का प्रकाशन किया जाता है। इसका हिसाब भी **शोधादर्श** में प्रकाशित होता है। **शोधादर्श** नाम के अनुसार समाज की समग्र गतिविधियों की एक्साइक्लोपीडिया होता है। पत्रकारिता के क्षेत्र में **शोधादर्श** आदर्श रूप ही है, बेजोड़ है। इसके अलावा आप स्थानीय जैन मिलन, दि. जैन महासमिति, दि. जैन परिषद, जैन शिक्षा संस्थान, अग्रवाल शिक्षा संस्था तथा अग्रवाल समाज से जुड़े रहे और विभिन्न पदों पर रहकर शिक्षा और समाज के विकास में अपनी सेवाऐं समर्पित करते रहे।

जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान की स्मृति स्वरूप श्रुत संवर्धन संस्थान मेरठ ने आपका नाम आचार्य विमलसागर (भिण्ड) श्रुत संवर्धन पुरस्कार (सन् १९९९) एवं अहिंसा इंटरनेशनल ने श्री प्रेमचंद जैन पत्रकारिता पुरस्कार (२००३) की गौरवमयी सूची में सम्मिलित कर अपने को उपकृत हुआ समझा। यह कार्य बहुत पहिले हो जाना था, किन्तु समाज/संस्थाओं की गुणग्रहण करने की पद्धति एवं प्रक्रिया ऐसी है जिसमें स्वाभिमानी व्यक्तित्व उपेक्षित हो जाता है।

उन्होंने जो आदर्श स्थापित किये उनकी ज्योति के प्रकाश में मिथ्या लेखन, अनैतिकता, कूट-संदर्भ, अवसरवादिता की प्रवृत्ति का अंधकार तिरोहित होगा और वे सदैव प्रकाशवान रहेंगे। भाई रमा कान्त जी एवं डॉ. शशि कान्त जी पूज्य पिताश्री एवं काकाश्री के मिशन को वृद्धिंगत करेंगे, ऐसी आशा है।

-ओ. पी. मिल्स कालोनी, अमलाई

सेतु : स्व. श्री अजित प्रसाद जैन

- श्री अंशु जैन 'अमर'

दिनांक २५ जून, दिन शनिवार, समय प्रातः के लगभग साढ़े ६ बजे दूरभाष पर सूचना मिली कि बाबाजी (स्व. श्री अजित प्रसाद जैन, जिन्हें हम लोग प्यार से छोटे बाबा जी कहते थे) की तबियत अचानक बहुत खराब हो गयी है। जब तक हम लोग चारबाग स्थित ज्योति-निकुंज मकान से निकल पाते सुदूरस्थ अमेरिका प्रवासी छोटी बुआ जी (बाबा जी की कनिष्ठ पुत्री) का पापा के पास फोन आ गया कि "भैया बाबूजी नहीं रहे।" यह सुन हम सभी परिजन एकदम स्तब्ध रह गये। क्योंकि कल रात ही ताऊ जी एवं पापा जी दोनों बाबा जी से मिलकर आए थे और उनके स्वास्थ्य में संतोषजनक सुधार हो चुका था। खबर निःसन्देह हम सभी पर वज्रपात थी। यह बाबा जी ही थे जो उस पीढ़ी की एकमात्र शेष कड़ी थे, जिन्होंने कभी-भी पारस-सदन से ज्योति-निकुंज की दूरी का एहसास नहीं होने दिया। एक मजबूत सेतु टूट चुका था।

आ. बाबा जी का जन्म १ जनवरी, १९१८ को श्री पारसदास जैन की तीसरी संतान के रूप में उस समय हुआ जब परिवार अत्यंत विषम स्थितियों से जूझ रहा था। इनके जन्म के साथ परिवार का भी भाग्योदय हुआ। ये अपने माता-पिता के द्वितीय पुत्र थे, कदाचित् इसीलिए संघर्षरत दिगम्बर जैन तेरापंथ आम्नाय के धर्मनिष्ठ माता-पिता ने उनका नाम द्वितीय जैन तीर्थंकर अजितनाथ के नाम पर अजित प्रसाद (अर्थात् द्वितीय तीर्थंकर के भेजे हुए) रख दिया।

आ. बाबा जी की अधिकांश शिक्षा मेरठ और आगरा में संपन्न हुयी। आगरा निवास के दौरान उन्हें ज्ञात हुआ कि वहां जैनेतर हिन्दू समाज के विरोध-भय के कारण महावीर-जयन्ती तक पर रथयात्रा नहीं निकलती है। उनके अग्रज श्री ज्योति प्रसाद जैन जी तथा उनकी सत्प्रेरणा एवं सहयोग से वर्ष १९३३ में आगरा में पहली बार रथयात्रा निकाली गई।

वे जैन कुमार सभा, मेरठ के संस्थापक सदस्यों में से एक थे। सभा की नियमित बैठकों में धार्मिक-दार्शनिक-सामाजिक-समसामयिक विषयों पर चिन्तन, व्याख्यान एवं परिचर्चाओं में वे सक्रिय रूप से भाग लेते थे। उनके विभिन्न विषयों पर प्रभावी अधिकार को देखते हुए ही मात्र १७ वर्ष की अल्पायु में जैन कुमार पत्र, मेरठ का

सम्पादन उन्हें सौंप दिया गया। अपनी प्रखर लेखनी से उन्होंने पत्र को नई ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया। मई १६३८ के अंक में अल्पवय में जैन दर्शन में उनकी गहरी आस्था और ज्ञान को उनका लेख 'ईश्वर का अस्तित्व' प्रदर्शित करता है-

"इस अनन्त गुणों के समुद्र, निराकुल, अक्षयसुख की निधि तथा सच्चिदानंद स्वरूप आत्मा का ही दूसरा नाम ईश्वर है। यही जैन-धर्म का मर्म है, यही उसका ईश्वरवाद है।" (**जैन कुमार पत्र,** मेरठ, मई १६३८, पृष्ठ-३६७)

वर्ष १६३६ में आर्मी हेडक्वार्टर्स शिमला में लिपिक पद पर नियुक्ति होने के कारण उन्हें मेरठ छोड़ना पड़ा। लेकिन शीघ्र ही जनवरी १६३७ में दाम्पत्य-सूत्र में बंधने के कारण मातृभूमि के विछोह से उत्पन्न एकाकीपन काफी हद तक दूर हो गया। शीघ्र ही अपनी कुशाग्र बुद्धि के कारण वर्ष १६३६ में आप उ.प्र. सचिवालय सेवा में शामिल हो गये। और प्रगति करते हुए तत्समय संवर्ग को उपलब्ध उप सचिव के सर्वोच्च पद से वर्ष १६७६ में ससम्मान सेवानिवृत्त हुए।

जैन कुमार पत्र के युवा मस्तिष्क एवं लेखनी को ४० वर्षों की वैविध्यपूर्ण शासकीय सेवा एवं मिश्रित अनुभवों ने तराशकर और अधिक पैनापन प्रदान कर दिया था, जो तर्क और ज्ञान की कसौटी पर कहीं अधिक टिकाऊ और चमकदार थी। शीघ्र ही, आपने **जैन गज़ट, समन्वय वाणी** एवं **शोधादर्श** जैसी स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं को अपनी स्याही से अभिसिंचित कर पवित्र करना शुरू कर दिया। उनके लेख कितने विद्वत्तापूर्ण एवं मर्मस्पर्शी होते थे यह पत्र-पत्रिकाओं में प्रबुद्ध पाठकों की प्रकाशित संवेदनशील सकारात्मक प्रतिक्रियाओं से ही ज्ञात हो जाता है। निःसन्देह उनका लेखन 'बेबाक शैली' का उत्कृष्ट उदाहरण है। उनके आलेख अहर्निश अध्ययन-अनुशीलन एवं अनुभवों का सुपरिणाम है। उनके सम्पादकीय, चिन्तनकण, समाचार-विमर्श एवं साहित्य-सत्कार न केवल पाठकों को 'आंतरिक तोष' प्रदान करते थे वरन् 'मस्तिष्क-पटल को झकझोरते' भी रहे। इसीलिए अनेक पाठक उन्हें 'विचारोत्तेजक लेखक' मानते हैं।

पत्रकारिता मात्र ज्ञान अथवा शब्दों का खिलवाड़ नहीं है। पत्रकारिता के लिए शालीनता, स्पष्टवादिता, तथ्यात्मकता, निर्भीकता, निष्पक्षता एवं अनेकांतवादिता जैसे गुण अपरिहार्य हैं। इन गुणों से न्यूनाधिक सम्पन्न अपने इतिहास, संस्कृति, धर्म, दर्शन, ज्ञान, समाज और देश पर निष्ठा रखने वाला समाज का सजग प्रहरी ही सच्चा पत्रकार है। आ. बाबाजी इन सभी मानकों पर खरे उतरे दिखायी पड़े। वे अपने

धर्म-दर्शन-शास्त्र-संस्कृति के संरक्षण के लिये जैन समाज को अल्पसंख्यक मान्यता प्रदान किए जाने के प्रबल समर्थक थे और जिनालयों में नित हो रही अमूल्य धरोहरों की चोरियों को रोकने के लिए एक राष्ट्रीय जैन संग्रहालय के निर्माण की आवश्यकता बताते थे। आ. बाबाजी सल्लेखना, केशलोंच, पिच्छि-परिवर्तन, सिंहरथ प्रवर्तन, दान महोत्सव आदि के भौंडे प्रदर्शन के रूप में बढ़ते शिथिलाचार के प्रबल विरोधी थे।

पूज्य आचार्य/आर्यिकाओं द्वारा 'गणधर' एवं 'गणिनी' विरुद धारण करने पर अपनी विरोधात्मक जिज्ञासा प्रकट करते हुए वे लिखते हैं-

"भगवान महावीर स्वामी के अन्तिम गणधर सुधर्मा स्वामी के बाद विगत २५०० वर्षों में किसी महान से महान आचार्य को उनके शिष्यों ने गणधर तुल्य भी नहीं कहा। किन्तु अब २०वीं शती के अंतिम चरण से गणधराचार्य कुन्थुसागर महाराज से प्रारंभ होकर गणधरों की एक नयी खेप अवतरित होने लगी है और हमारी जानकारी में कम से कम तीन आचार्य तो अपने को इस उपाधि से अलंकृत करा ही चुके हैं। पता नहीं इन महामुनियों ने किस तीर्थंकर की प्रतीक्षा में पहले से ही गणधर पदवी धारण कर ली है।" (**समन्वय वाणी**, अगस्त २००४ (प्रथम) , पृ.-३)

आ. बाबा जी का तो स्पष्ट मत था कि साधुओं में ऊँच-नीच का भेद असंभव है- "हमें तो किसी पूज्य आचार्य या आर्यिका माता के पद नाम के साथ 'शिरोमणि' की उपाधि लगाना या उन्हें सर्वोच्च घोषित करना भी बड़ा विचित्र लगता है। क्या साधुओं में आचार्य, उपाध्याय पदों के अतिरिक्त ऊँच-नीच का भेद किया जा सकता है? क्या किसी को शिरोमणि या सर्वोच्च प्रचारित करना उसी पद के धारी अन्य साधुओं की अवमानना नहीं है? सुधी जनों को विचार करना चाहिए।" (**शोधादर्श**-३२, पृष्ठ-१०६)

आचार्यों को भगवान जिनेन्द्र के समकक्ष रखकर उनकी **भक्तामर-स्तोत्र** से स्तुति किए जाने को अनुचित एवं शास्त्रों का अवमूल्यन मानते हुए उन्होंने लिखा है-

"जिन शासन में कोई भी महान आचार्य भगवान जिनेन्द्र का स्थान नहीं ले सकता। किसी प्राचीन भक्त शिरोमणि आचार्य विरचित **भक्तामर** काव्य का या उसके किसी श्लोक का किसी आचार्य की स्तुति में उपयोग करना हमारी समझ में अनुचित है, इस उत्कृष्ट भक्ति काव्य का अवमूल्यन करना है। (**शोधादर्श**-३१, पृ.-४५)

कलियुगी आचार्यों के अंधभक्तों द्वारा पूज्य आचार्य की पुण्य-तिथि पर समाधि-स्थल पर प्रतिमा स्थापित कर पंचामृताभिषेकपूर्वक आरती-पूजन को वे

लोक-मूढ़ता मानते थे- "ऐसा लगता है कि कुछ वर्ष पूर्व आचार्य श्री को 'कलिकाल-सर्वज्ञ' की उपाधि से अलंकृत करने वाले उनके शिष्य एवं भक्तगण अपनी भक्ति एवं श्रद्धा के अतिरेक में यह विश्वास करते हैं कि आचार्य श्री ने इस नश्वर देह को त्यागकर सचमुच ही मोक्षगमन किया है। यदि ऐसा है तो यह उनकी दृष्टि में वर्तमान हुंडावसर्पिणी काल का एक ऐसा अछेरा होगा जिसकी कल्पना प्राचीन दिगम्बर जैन आचार्य गण नहीं कर पाये थे। .... किसी आचार्य-मुनि की प्रतिमा को वेदी में विराजमान कर उसका जिनेन्द्र प्रतिमा के समान अभिषेक - पूजा, आरती करना तो धर्म या लोकमूढ़ता ही कहलाएगी।" (**शोधादर्श**- ३१, पृष्ठ-७४)

प्रतिमा ही नहीं, मुनिराजों द्वारा 'कलिकाल-तीर्थंकर' जैसे विरुदों से अलंकृत होने पर वह कह उठते हैं- "प्राचीन आचार्यों ने २५वें तीर्थंकर की संभावना को सर्वथा नकार दिया है। भगवान महावीर के उपरांत किसी महान् आचार्य को भी तीर्थंकर कहना या मानना तीर्थंकर का अवर्णवाद है।" (**शोधादर्श**-३२, पृष्ठ-१०६)

आधुनिक साधु-समाज द्वारा अर्हत् पद की प्राप्ति के लिए नित नये सुझाये जा रहे शार्ट-कट्स के प्रति करारी चोट करते हुए आपने लिखा है- "इस पंचम काल में तो उस श्रमणाचार के माध्यम से की गई कठोरतम साधना से भी अर्हन्त पद की प्राप्ति संभव नहीं- ऐसा स्वयं गणधर देव कह गये हैं। ऐसे में आर्यिका चन्दनामती जी ने 'श्री ज्ञानमती त्रिषष्ठि पताका' रचकर जैन जगत पर महान उपकार किया है क्योंकि इसके तो केवल श्रद्धा व रुचि से पढ़ने मात्र से त्रेसठ कर्म प्रकृतियों का नाश हो जाएगा-ऐसा उनका वचन है इस अतीव सरलतम नुस्खे को ईजाद करने के लिए आर्यिका चन्दनामती जी का जितना साधुवाद किया जाय, थोड़ा है। इस पंचम काल में अतीत में हुए महान योगी तपस्वी आचार्यों, मुनिराजों के समय में इस नुस्खे के ईजाद न होने से वे तो इसका लाभ उठाने से वंचित रह गये, पर हम आशा करते हैं कि न केवल रचयित्री आर्यिका जी स्वयं वरन् उनकी गुरुणी माताजी सहित संघस्थ सभी साध्वियाँ, क्षुल्लक, ब्रह्मचारी इस नुस्खे से लाभ उठाकर अपने भवसागर को सफलतापूर्वक पार कर लेंगे। (**शोधादर्श**-३२, पृष्ठ-१६८)

आ. बाबा जी ने मुनि संघों में बढ़ते अनाचार एवं दुराचार से चिंतित होकर बड़ी निर्भीकता एवं दृढ़तापूर्वक अपना सुझाव रखा था- "हमारी यह भी समझ में नहीं आता कि मुनि संघों में महिलाओं के (आर्यिका, ब्रह्मचारिणी, संघ संचालिका आदि किसी भी रूप में) तथा इसी प्रकार आर्यिका संघों में पुरुषों के प्रवेश को कठोरतापूर्वक

वर्जित करने में कौन सी बड़ी कठिनाई है।" (**समन्वयवाणी**, मई २००४ (प्रथम), पृष्ठ-७)

वे धर्म-गुरुओं की समाज-सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हुए पथ-प्रदर्शन करते हैं- "यदि हमारे मुनि-आर्यिकाएं भी अपने प्रवचनों में दहेज प्रथा निषेध तथा विवाहादिक सामाजिक आयोजनों को सादगी के साथ सम्पन्न करने पर जोर दें तथा श्रावकों से प्रतिज्ञा करावें तो इस समस्या का बहुत कुछ निराकरण हो सकता है।" (**समन्वयवाणी**, जुलाई २००४ (द्वितीय), पृ.-३)

उनका यह विश्वास था कि धर्म-तीर्थ स्थलों के विवादों का विभिन्न आम्नायों के साधुगण परस्पर वार्ता के माध्यम से सर्वमान्य हल खोज सकते हैं।

ऊपर उद्धृत लेखांशों के रूप में समाज में व्याप्त कुरीतियों, अनाचार एवं शिथिलाचार आदि के कारण धर्म के मूल स्वरूप में निरन्तर हो रहे अवमूल्यन के विरुद्ध इतनी स्पष्ट एवं निर्भीक अभिव्यक्ति एक स्वान्तः सुखाय पत्रकार ही कर सकता है, जो न सिर्फ प्रशंसनीय वरन् अभिनन्दनीय भी है।

इस भवसागर को पार करने में आचार्य-मुनि-आर्यिकागण रूपी सेतु ही जब वर्तमान कलियुग में स्वयं तूफान बन जाये तब सच्चे मार्ग के ऐसे प्रकाशक पत्रकारिता के श्रेष्ठ प्रतिमानों को स्थापित करते हुए स्वयं ही समाज के सेतु बन जाते हैं। निस्संदेह आ. बाबा जी मात्र दो मकानों अथवा दो पीढ़ियों के सेतु नही थे, वह तो समस्त जैन समाज के सेतु थे, और उसकी अमूल्य धरोहर भी। उनको हमारा शत्-शत् नमन् और अभिवन्दन।

- ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, द्वारा २८ जून, २००५ ई. को अभिव्यक्त श्रद्धांजलि

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, अत्यन्त दुख के साथ यह अभिव्यक्त करती है कि संस्था के संस्थापक महामंत्री, वयोवृद्ध विद्वान, निर्भीक पत्रकार और सक्रिय समाजसेवी श्री अजित प्रसाद जैन दिनांक २५ जून, २००५ ई. को सदा के लिये हमसे बिछड़ गये। उनका उस दिन प्रातः ७.३० बजे शरीर शान्त हो गया। मुखमण्डल पर छवि से यह स्पष्ट था कि उनकी आत्मा का प्रयाण शान्तिपूर्ण था और अन्त समय में उनके परिणाम आर्त नहीं थे।

इस संस्था के वह प्राण थे और इसकी समस्त गतिविधियों के प्रेरणास्रोत एवं संचालक थे। समग्र जैन समाज की स्थानीय एवं सार्वदेशीय गतिविधियों में उनका निरन्तर सहयोग एवं सहकार रहा।

श्री अजित प्रसाद जैन के अभाव की पूर्ति संभव नहीं है। वह हमारे लिये सदैव ही प्रेरणास्रोत रहेंगे। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, रुद्ध कण्ठ से यह प्रार्थना करती है कि दिवंगत आत्मा को चिरशान्ति और सद्गति प्राप्त हो, तथा उनके शोक संतप्त स्वजनों के प्रति हार्दिक सम्वेदना व्यक्त करती है।

अध्यक्ष, श्री लूणकरण नाहर जैन की श्रद्धांजलि-

स्व. श्री अजित प्रसाद जी जैन 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.' के महांमत्री और इसी संस्था से निकलने वाली पत्रिका **शोधादर्श** के प्रधान सम्पादक थे। मेरा आपसे परिचय सन् १९८१ से था जब आप चातुर्मास के समय लाभचन्द्र जी म. सा. के प्रवचन सुनने अपने बड़े भाई और जैन समाज के मूर्धन्य विद्वान स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन के साथ मुन्ने लाल कागजी जैन धर्मशाला में आते थे। मैं भी वहाँ रोज म. सा. के प्रवचन सुनने जाता था। प्रवचन के बाद रोज ही मेरा आपसे मिलना होता था। फिर १९९७ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति का अध्यक्ष बना तो आपके पास अन्तिम समय तक मेरा बराबर आना जाना रहा। आप जैन समाज के महान विद्वान होने के साथ ही बहुत सरल स्वभाव के थे। आप धर्म में आडम्बर और जैन मुनियों में जो शिथिलाचार फैल रहा था उससे काफी दुःखी रहते थे और अपने सम्पादकीय में उस पर हरदम सटीक चोट करते रहते थे। श्रावक के लिये शास्त्रों में जो भूमिका अम्मापिया (माता-पिता) की बताई है उस पर आप अमल करके सुधारवादी दृष्टिकोण से **शोधादर्श** में अपने सम्पादकीय लिखते थे। मैं अपनी और संस्था की ओर से स्वर्गस्थ आत्मा को शाश्वत सुखों की प्राप्ति हो, ऐसी कामना करता हूँ।

उनका वियोग त्रासदी है

–उपाध्यक्ष, श्री कन्हैया लाल जैन

प्रकृति का यह नियम है कि जो एक दिन संसार में आता है उसे एक दिन अवश्य जाना होता है। जीवन-मरण के इस बीच के जीवन को लोग प्रायः अपने या अपनों के लिये सुख-सुविधा जुटाने में व्यतीत कर देते हैं और उन्हें मृत्यु के बाद जल्दी ही भुला दिया जाता है। किन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो अपनी सेवा भावना, समर्पण और परोपकार के कार्यों से इतिहास के अंग बन जाते हैं और वर्षों तक यह समाज उनसे प्रेरणा लेता रहता है।

जैन समाज के एक ऐसे ही मूर्धन्य विद्वान, निर्भीक पत्रकार और वयोवृद्ध समाजसेवी श्री अजित प्रसाद जैन का दिनांक २५ जून, २००५ ई. को लखनऊ में देहावसान हो गया।

श्री अजित प्रसाद जी से मेरा परिचय विगत ५० वर्ष से था। सन् १९५८ में दीपावली पर पावापुरी में निर्वाण लाडू चढ़ाने हम साथ-साथ गये थे। तदनन्तर राजगृह, सम्मेदशिखरजी आदि की तीर्थयात्रा उनके साथ सानन्द की थी।

स्व. श्री अजित प्रसाद जैन का जन्म मेरठ में १ जनवरी, १९१८ को हुआ था। उ.प्र. सचिवालय में नियुक्ति होने पर सन् १९३९ से लखनऊ ही उनकी कर्मस्थली रही।

भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव के लिये उ.प्र. में मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में गठित 'श्री महावीर निर्वाण समिति' के वह शासन स्तर पर उप-सचिव एवं प्रभारी अधिकारी थे। उन्होंने पूरे प्रदेश में भ्रमण करके ऐसा अलख जगाया कि जैन समाज के साथ-साथ सरकारतन्त्र भी श्री महावीरमय हो गया। उनके निर्देशन और संचालन में शोध पुस्तकालय की स्थापना हुई। सन् १९८६ में इन्होंने एक चातुर्मासिक पत्रिका **'शोधादर्श'** का प्रकाशन प्रारंभ किया। जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में अन्यतम योगदान के लिये श्री अजित प्रसाद जी को वर्ष १९९९ में 'आचार्य विमलसागर (भिण्ड) श्रुत संवर्द्धन' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अक्टूबर, २००४ को भी लखनऊ की जैन समाज द्वारा उनका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया था।

जैन शिक्षण संस्थान, जिसका मैं (कन्हैया लाल जैन) मंत्री रहा, में शासकीय स्तर पर उन्होंने अभूतपूर्व सहयोग दिया। कोई भी कार्य रुकने नहीं दिया और जैन शिक्षा संस्थान इस कारण एक अग्रणी शिक्षा संस्थान बन पाया, जिसके लिये जैन शिक्षण संस्थान सदैव आपका आभारी रहेगा।

उनका वियोग परिवार, समाज और सम्बद्ध संस्थाओं तथा इष्टमित्रों के लिये त्रासदी है। यह एक ऐसी शून्यता और रिक्ति है जो निरंतर सालती रहेगी।

सामाजिक कार्यों में मेरे प्रेरक

–उपाध्यक्ष, श्री नरेश चन्द्र जैन

वर्ष १६५६ में मैं सचिवालय सेवा में नियुक्त होकर लखनऊ आया। स्व. श्री अजित प्रसाद जी भी सचिवालय में उच्च पद पर नियुक्त थे तथा उनके भतीजे डॉ. शशि कान्त एवं श्री रमा कान्त जी भी इसी सेवा में होने के कारण मेरा उनसे निकट सम्पर्क बना। उनसे मुझे भतीजे के रूप में ही स्नेह प्राप्त हुआ।

उन्हें सामाजिक कार्यों में सदैव विशेष रुचि रही। मुझे भी उनसे इस दिशा में प्रेरणा प्राप्त हुई। १६५६ में जैन मिलन संस्था की शुरुआत होने पर तथा १६६० में चौक स्थित जैन विद्यालय के विकास कार्य में मुझे उनसे काफी दिशा निर्देश मिले। इसके अलावा अ.भा. दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी तथा अ.भा. दि. जैन परिषद आदि संस्थाओं से भी मेरा सम्पर्क उन्हीं के माध्यम से बना।

१६७६ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति का गठन होने पर प्रारम्भ से उन्हीं के निर्देशन में इस संस्था में कार्य करने का अवसर मिला।

रुग्णावस्था में भी सदैव मुझे फोन करके बुलाते थे और निर्देश देते थे। मेरे लिए वह अविस्मरणीय हैं। मेरी प्रार्थना है कि भगवान उनकी आत्मा को शांति प्रदान करे।

चित्रावली

श्री अजित प्रसाद जैन

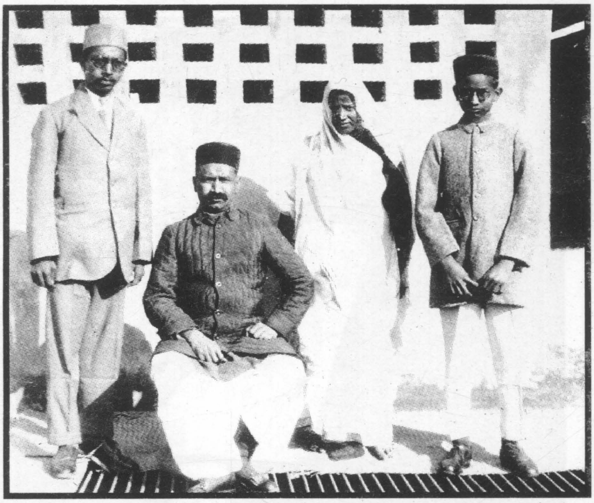

अपने अग्रज, पिताजी
और माताजी के साथ
सन् १९३३ ई. में

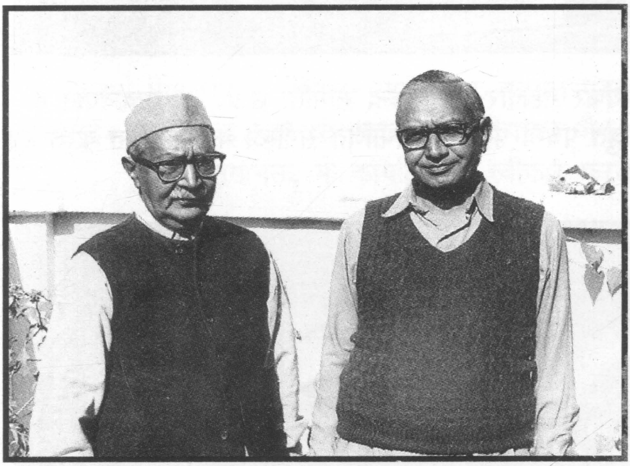

अपने अग्रज डॉ.
ज्योति प्रसाद जैन के साथ

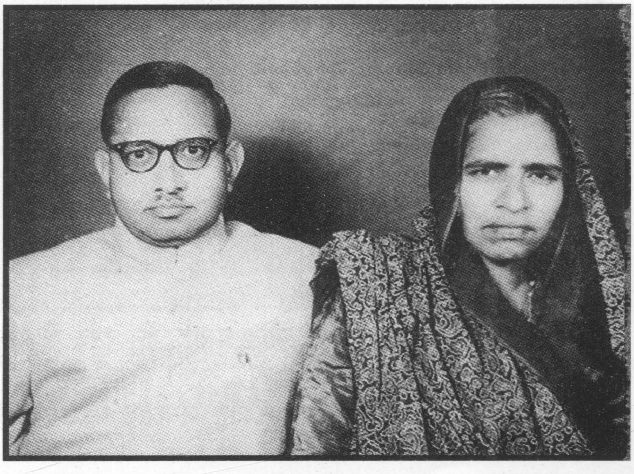

अपनी धर्मपत्नी के साथ
१८ जनवरी, १९६२ ई. में

३ जून, १९९५ ई. को तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के तत्वावधान में बाल रवीन्द्रालय, लखनऊ में श्रुत पंचमी पर्व पर आयोजित संगोष्ठी को संबोधित करते हुए।

अनन्त-ज्योति विद्यापीठ और ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट के संयुक्त तत्वावधान में ज्योति , निकुंज, लखनऊ में इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की १०वीं पुण्य तिथि पर ११ जून, १९९८ ई. को आयोजित सारस्वत समारोह में सभा को सम्बोधित करते हुए।

'आचार्य विमलसागर (भिण्ड) स्मृति श्रुत संवर्धन पुरस्कार १९९९', दिनांक ८ दिसम्बर, १९९९ ई. को श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा, लखनऊ, के कार्यालय में स्वीकार करते हुए।

२० अप्रैल, २००३ ई. को चिन्माया सभागार, नई दिल्ली में अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा 'प्रेमचन्द जैन पत्रकारिता पुरस्कार, २००२' से सम्मानित किये जाते हुए।

१४ जनवरी, १६७४ ई. को एक पारिवारिक समारोह में स्वजनों के साथ।

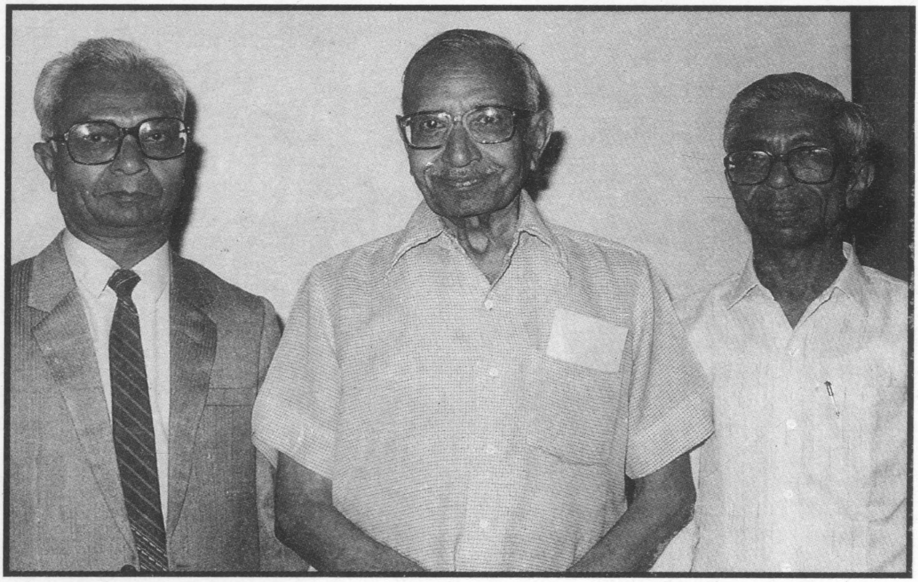

५ अक्टूबर, १६६२ ई. को अपने भ्रातृज डॉ. शशि कान्त और रमा कान्त के साथ।

अन्तिम यात्रा

- संयुक्त मंत्री, श्री नलिन कान्त जैन

२५ जून की प्रातः सब माया मोह छोड़, अपनों से मुँह मोड़ अनन्त-पथ के राही बने आदरणीय बाबाजी श्री अजित प्रसाद जी का पार्थिव शरीर, उनकी इच्छानुसार, हिंसा विरत प्रक्रिया से विद्युत् शवदाह गृह में २६ जून को पंचतत्व में विलीन हो गया।

उनकी अन्तिम यात्रा मे जैन एवं जैनेतर समाज के लोग भारी संख्या में सम्मिलित रहे। जिन तीन संस्थाओं-यथा-तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट और अनन्त-ज्योति विद्यापीठ, से वह अन्यतम रूप से समबद्ध रहे थे, की ओर से श्रद्धास्वरूप पुष्पचक्र उनके शव पर अर्पित किये गये।

२८ जून को चारबाग, लखनऊ में स्थित मुन्नेलाल कागजी धर्मशाला के प्रांगण में उनके प्रति लखनऊ की विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधियों द्वारा श्रद्धांजलि अर्पित की गई। मेरठ से वहाँ की जैन बिरादरी के प्रतिनिधि श्री हुकमचंद जैन, टिकैतनगर से श्री लालचंद जैन, हरदोई जैन समाज के अध्यक्ष श्री सुमतप्रसाद जैन, स्थानकवासी समाज एवं ओसवाल जैन समाज की ओर से श्री लूणकरण नाहर, जैन शिक्षण संस्थान की ओर से श्री शैलेन्द्र जैन, दिगम्बर जैन महासमिति एवं मुन्नेलाल कागजी ट्रस्ट की ओर से श्री अजय कागजी, श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा की ओर से श्री विजय काला, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति की ओर से श्री नरेशचंद्र जैन, जैन मिलन की ओर से श्री विशाल जैन, अग्रवाल सभा के श्री जगदीश जिन्दल तथा अन्य प्रबुद्ध जनों यथा- श्री विष्णुदत्त शर्मा, डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशान्त' और श्री प्रकाश चन्द्र 'दास' ने श्रद्धेय अजित प्रसाद जी के प्रति श्रद्धा-सुमन अर्पित किये। उनके भ्रातृज श्री रमा कान्त ने श्रद्धांजलि सभा का संचालन किया और ज्येष्ठ भ्रातृज डॉ.शशि कान्त ने उनके जीवन, कृतित्व और रुग्णावस्था के अन्तिम दिनों के सम्बन्ध में मार्मिक प्रकाश डाला।

श्रद्धांजलि सभा में ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट, लखनऊ; तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.; भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा; श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन सभा, लखनऊ; जैन मिलन लखनऊ तथा अनन्त-ज्योति विद्यापीठ द्वारा पारित शोक-प्रस्तावों का वाचन भी हुआ।

जैन पत्र-पत्रिकाओं में सर्वप्रथम लखनऊ से प्रकाशित साप्ताहिक **'जैन गज़ट'** ने अपने ३० जून के अंक में 'छपते-छपते' के अन्तर्गत उनके निधन की सूचना दी और ७ जुलाई के अंक में सचित्र भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। जयपुर से प्रकाशित पाक्षिक **'समन्वय वाणी'**, जिसके श्रद्धेय अजित प्रसाद जी प्रधान सम्पादक रहे थे, ने जुलाई २००५ (प्रथम पक्ष) के अंक में भावभीनी श्रद्धांजलि स्वरूप डॉ. अभय प्रकाश जैन का आलेख 'सूर्य जो अस्त हो गया।' प्रकाशित कर समाचार को गति दी। जैन जगत अपने बीच से एक निर्भीक समाजसेवी पत्रकार के चले जाने से स्तब्ध रह गया।

जयपुर के सी-स्कीम स्थित परमानंद हॉल में अ. विश्व जैन मिलन, दिग. जैन महासमिति (न्यू कॉलोनी), अ. विश्व जैन मिशन और भारत जैन महामण्डल के संयुक्त तत्वावधान में डॉ. ताराचंद्र जैन बख्शी की अध्यक्षता में एक श्रद्धांजलि सभा आयोजित हुई जिसमें डॉ. बख्शी के अतिरिक्त सर्वश्री रणजीत सिंह शेखावत, संतोष शर्मा, रामकृष्ण मूंदड़ा, धनराज जैन, रिषभ कासलीवाल, जे. पी. अग्रवाल और एम.पी. कौल आदि वक्ताओं ने श्री अजित प्रसाद जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये।

माह जुलाई में नई दिल्ली से प्रकाशित मासिक **'स्थूलिभद्र संदेश'** और **'जैन प्रचारक'**, लखनऊ की मासिक पत्रिका **'श्रुत संवर्धिनी'** तथा चातुर्मासिक **'शोधादर्श'** और मथुरा से २७ जुलाई को प्रकाशित पाक्षिक **'जैन सन्देश'** ने तथा पहली अगस्त को आगरा से प्रकाशित साप्ताहिक **'श्वेताम्बर जैन'**, २ अगस्त को पुणे के **'धर्ममंगल'**, अगस्त में इंदौर से मासिक **'तीर्थंकर'**, नई दिल्ली के पाक्षिक **'दिगम्बर जैन महासमिति पत्रिका'** (अगस्त-१-१५) व मासिक **'वीर'** (अगस्त), पुनः मथुरा के पाक्षिक, **'जैन सन्देश'** ने २४ अगस्त के अंक में डॉ. राजाराम जैन के भावभीने सम्पादकीय, मुजफ्फरनगर से प्रकाशित **'वर्णी प्रवचन'** (अगस्त-सितम्बर), टीकमगढ़ की पत्रिका **'वीतराग वाणी'** (सितम्बर-अक्टूबर) और लखनऊ की मासिक पत्रिका **'प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार'** (सितम्बर) ने श्री अजित प्रसाद जी के व्यक्तित्व और कृतित्व को नमन् कर उन अजेय को अमर कर दिया। **'समन्वय वाणी'** (जयपुर) ने अपने अक्टूबर (द्वितीय पक्ष) के अंक को उनके प्रति श्रद्धा-सुमनों से सज्जित किया।

अभिन्न मित्र अजित प्रसाद जी

- श्री महावीर प्रसाद जैन सर्राफ

जिनवाणी, शाकाहार, अहिंसा और मानवता का प्रचार मेरा बचपन से शौक रहा है। १६८६ अप्रैल में **'सहज सुख साधन'** ग्रंथ ब्र. शीतलप्रसाद जी का संकलित कर छपाया-दो दफा में ३५०० प्रतियां। पत्रिकाओं में निकालता था कि जिसे चाहिए निःशुल्क मंगा लें। मेरे अभिन्न मित्र भाई साहब अजित प्रसाद जी का प्रथम पत्र आया कि एक प्रति **'सहज सुख साधन'** की भेज दें। मैंने **'सहज सुख साधन'** एवं ६ अन्य ग्रंथ कुल १० ग्रंथ भेज दिये।

सप्ताह में उनका मेरा पत्र आता रहता था। जो भी ग्रंथ वितरण में होता भेजता ही था। **'समाधि दीपक'** का पांचवा संस्करण अभी छपा था, उसकी प्रति भेजी। पहले भी उसकी प्रति भेजी थी। अपने दुख सुख की सभी बातें पत्र में हम लिखते थे। दो दफा दरियागंज नई दिल्ली भी भाई साहब आये थे तभी मैंने अपने अभिन्न मान्य पं. पद्मचंद जी शास्त्री जी को बुलाया। तीनों का विशेष प्रेम रहा। धर्मपत्नी, जवान पुत्रों का उनके ही सामने स्वर्गवास तथा हार्ट की बीमारी सभी होते हुए भी **'शोधादर्श'** जो उन्होंने मुझे भेजना शुरू किया था उसमें किसी प्रकार की भी शिथिलता नहीं आने दी। ओजस्वी लेखक थे। निर्भीकता, सत्यता के साथ शिथिलाचार के विरुद्ध सतत लिखते रहे। मेरी तरह, उनका पोस्टकार्ड भी इतना भरा होता था कि एक भी शब्द कहीं नहीं लिखा जावे। मैं वर्ष में १० माह यात्रा में ३२ वर्षों से रहता हूं। सभी पत्र-पत्रिका बच्चे भेजते रहते हैं, लाते हैं। जब से अजित प्रसाद जी की तबियत खराब हुई मैं कभी-कभी फोन भी मिलाता रहता था।

वयोवृद्ध, जिनवाणीसेवक, कर्मठ कार्यकर्ता, बेबाक टिप्पणी करने वाले, **शोधादर्श** के सम्पादक, अपने ज्येष्ठ भ्राता डॉ. ज्योति प्रसाद जी से विरासत में मिले ज्ञान द्वारा शिथिलाचार के विरुद्ध सतत लिखते रहे। उनके भतीजों डॉ. शशिकांत जी एवं रमाकांत जी ने 'शोधादर्श' में हमेशा अपने खोजी महत्वपूर्ण लेख एवं हँसी के गोल गप्पे जैसी क्षणिकाओं द्वारा तथा बीमारी में अपने चाचाजी की भरपूर सेवा कर चार चांद लगाये।

भाई साहब के स्वर्गवास से ४-५ माह पूर्व मैंने उन्हें **'समाधि दीपक'** फिर भेजी थी तथा लिखा था कि इसमें की २० कथा उन मुनिराजों की हैं जिन पर उपसर्ग भी

आये और अंतिम समय में समाधि ली और मोक्ष प्राप्त किया तथा कुछ ने सर्वार्थसिद्धि प्राप्त की। एक लम्बा पत्र भी लिखा था, समझाया था। वह इसे आत्महत्या समझ बैठे तथा **'शोधादर्श'** में इसके विरुद्ध लिखा भी। जिस पर बचपन से धार्मिकता की पुट हो, जो व्रत-उपवास, स्वाध्याय करता हो वह प्रत्येक जैन यह भावना करता है कि मेरा समाधिमरण हो। समाधिमरण- राग-द्वेष मोह रहित हो, जिनात्मा में ध्यानस्थ रहूं। मैंने दस मुनिराजों की समाधि भी कराई है, प्रथमतः १९५८ में। सभी संघों में खूब रहा था, किंतु अब शिथिलाचार की हद ने घृणा करा दी है। मठाधीश, व्यभिचार, करोड़ों के बैंक बैलेंस, समाज में झगड़ा कराना, पुस्तकों पर पुस्तकें छपवाना-त्यागी पने की बात तक नहीं प्रायः। चौथे काल के त्यागी कहलाने वाले सबसे खतरनाक हैं। भाई साहब के मन में एक टीस थी कि किसी भी तरह यह शिथिलाचार दूर हो।

श्री १००८ जिनराज प्रभु-वीतराग प्रभु से करबद्ध प्रार्थना करता हूं कि भाई साहब अजित प्रसाद जी यथाशीघ्र जन्म-मरण रहित होवें, पंचमगति, अजरता, अमरता प्राप्त करें। दिवंगत आत्मा को सविनय सादर श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं। परिवार में सभी को उनके पथ पर चलने का क्रम रहे, शांति प्राप्त हो।

- ७/३६ ए, दरियागंज, नई दिल्ली-२

श्रद्धांजलि

- जस्टिस एम. एल. जैन

यह जानकर कि बन्धुवर अजित प्रसाद जी हम सब को गत २५ जून को छोड़कर चले गये दिल को गहरा धक्का लगा। उनसे मेरे इतने सहज और मधुर सम्बन्ध बन गये थे कि उनका जाना हर पल दुखद लगने लगा है। हालांकि हम आपस में रूबरू कभी नहीं मिल पाये। उनके जैसे तपस्वी, विद्वान, समाज सुधारक और चिन्तनशील व्यक्ति का उठ जाना जैन धर्म और समाज के लिए बड़ी भारी क्षति हुई है जिसकी पूर्ति होना उतना ही असंभव है जितना आप के पिता श्री डॉ. ज्योति प्रसाद जी के निधन से हुई थी। कहां है अब वैसे लोग! प्रभु उनकी आत्मा को शांति प्रदान करें।

१५--७-२००५ **तिलकनगर, जयपुर**

अपराजेय लेखनी के धनी- श्री अजित प्रसाद जैन

- ब्र. संदीप 'सरल'

पत्रकारिता जगत में अपनी एक अमिट पहचान बनाने वाले श्री अजित प्रसाद जी भले ही अपनी भौतिक- नश्वर देह से २५ जून, ०५ को हम सभी के बीच से चल बसे, किन्तु अपनी यशः कीर्ति, मूक श्रुत सेवा के रूप में सदैव स्मरण किये जाते रहेंगे। वह उन्होंने सन् १६१८ में मेरठ में जन्मे और सन् १६३६ में उन्होंने उ. प्र. लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित सचिवालय सेवा परीक्षा उत्तीर्ण की। अग्रज भ्राता इतिहास मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन द्वारा स्थापित **शोधादर्श** पत्रिका के सम्पादन का उत्तरदायित्व लेकर अपनी कठोर कर्मठ कार्यशैली, निष्पक्ष लेखनी एवं क्रांतिकारी सम्पादकीय विचारों के लेखन से **शोधादर्श** पत्रिका को एक शुद्ध पत्रिका की श्रेणी में स्थान दिलवाया। **शोधादर्श** पत्रिका की प्रतिष्ठा एक आदर्श पत्रिका के रूप में बनाने में आपकी कर्मठता को 'आ. विमलसागर (भिण्ड) श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार' एवं 'श्री प्रेमचन्द जैन पत्रकारिता पुरस्कार, अहिंसा इन्टरनेशनल, नई दिल्ली- आदि उच्चतम पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। **शोधादर्श** के अलावा **समन्वयवाणी**, जयपुर के आप प्रधान सम्पादक रहे और यावत् जीवन शिथिलाचार के विरोध में लिखते रहे।

आप एक सजग प्रहरी थे, अनेक पारिवारिक त्रासदियां भी आपको विचलित नहीं कर सकीं। आप शारीरिक रूप से अस्वस्थ रहते हुए भी मानसिक रूप से पूर्ण स्वस्थ थे। आपने अपनी 'अंतिम अभिलाषा' में जो भावनायें प्रगट की थीं वे आपके आदर्श अन्तस्करण को ही प्रगट करती हैं।

मेरा साक्षात् परिचय आपसे नहीं हुआ, किन्तु पत्राचार के माध्यम से परोक्ष परिचय लगभग डेढ़ दशक से चलता रहा है। पाण्डुलिपियों के संरक्षण-संवर्द्धन, प्रचार-प्रसार के पुनीत कार्य में संलग्न अनेकान्त ज्ञान, मंदिर शोध संस्थान,बीना की गतिविधियों की प्रशंसा वह सदैव करते रहते थे। इतना ही नहीं, शोधादर्श में भी समय-मय पर श्रुत संरक्षण के क्षेत्र में अनेकान्त ज्ञान मंदिर के कार्यों की सराहना करते रहे।

आपेक निधन से जैन समाज ने एक निर्भीक सत्यान्वेषी विचारक एवं लेखक को खो दिया है। **अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान, बीना** की ओर से उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके कल्याण की भावना रखता हूँ।

- अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान, बीना (सागर)

मेरे अनन्य श्रद्धापात्र श्री अजित प्रसाद जी

– श्री मोतीलाल जैन 'विजय'

सम्पादन के क्षेत्र में यशस्वी नामों की यदि सूची बनाई जावे तो बहुत लम्बी सूची की संभावना सदैव बनी रहती है। श्रेणी-विभाजन भी संकट से कम नहीं हैं विगत दशक को ही लें तो मासिक, त्रैमासिक, चातुर्मासिक, साप्ताहिक, पाक्षिक तथा दैनिक पत्र-पत्रिकाएं प्रचुर संख्या में प्रकाशित हो रही हैं।

कुछ पत्र-पत्रिकाएं विशुद्ध धार्मिक समाचारों तक सीमित हैं, कुछेक में सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक सामग्री पाई जाती है। दिगम्बर जैन समाज में पुरातन की दृष्टि से जैन मित्र, जैन गज़ट, सर्वप्रथम साप्ताहिकों में है। इनका प्रचार-प्रसार अधिकांश सभी राज्यों तक है।

अखिल भारतीय स्तर तक प्रचार-प्रसार यदि मापदंड माना जावे तो कुछ पत्रिकाएं यथा- 'अहिंसावाणी' (अलीगंज) अर्धशती पूर्ण कर चुकी हैं और कुछ अर्धशती की ओर हैं। विस्तृत जानकारी न होने से चर्चा संभव नहीं--

इन सबसे भिन्न शोध क्षेत्र में कार्य कर रहीं पत्र-पत्रिकाएं अर्थाभाव से जूझती हुई भी शोध छात्रों का सहारा बनी हुई हैं। दिगम्बर जैन समाज में स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं को यथेष्ट आर्थिक सहाय्य नहीं मिल पाता, यह कहने में कोई संकोच नहीं। यह तो हमारे मनस्वी सम्पादकों, सम्पादकीय टीम की अनवरत लगन है जो सीमित साधनों में भी साहित्य की ज्योति जगाए हुए हैं।

प्रकृत विषय पर चर्चा करूं तो **'शोधादर्श'** चातुर्मासिकी के परम आदरणीय सम्पादक स्व. अजित प्रसाद जी जैन का महनीय योगदान अविस्मरणीय है। पत्रिका की सम्पूर्ण सामग्री विविधताओं से भरी तथा तथ्यपूर्ण रहती है। यह भी सुयोग है कि सम्पादकीय, गुरुगुणकीर्तन, स्वास्थ्यचर्चा, साहित्यसत्कार, समाचार विमर्श, समाचार विविधा, पाठकीय प्रतिक्रियाएं, चिन्तनकण तथा हमारे समाज के वरिष्ठ जनों, साहित्यसेवियों की वियोग जन्य सूचनादि सभी कुछ एक साथ पाठककों को उपलब्ध होता है।

प्रख्यात लेखक/साहित्यकार श्री सुरेश सरल (जबलपुर) ने अपने लेख नवम्बर २००४ के **शोधादर्श** में ठीक ही लिखा था- "कहां तो सुदूरवर्ती स्थान पर निवास कर रहे सम्पादक जी और कहां यत्किंचित साधना कर रहा मैं। यह तो व्यक्ति के गुण हैं जिनका अनुराग हमें कुछ लिखने को बाध्य कर रहा"--

पं. सुरेश सरल जी के कथन से मैं भी पूर्णतः सहमत हूं। परम श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जी तथा डॉ. कामता प्रसाद जी जैन (अ. वि. जैन मिशन) से महाविद्यालयीन अध्ययन के चलते कुछ समाज के लिए करने की उत्कृष्ट इच्छा लिए पत्राचार करता

था। उनके समाधानात्मक पत्र भी आते रहे। इसी कड़ी के अध्येता/प्रस्तोता रहे हैं हमारी अनन्य श्रद्धा के पात्र श्री अजित प्रसाद जी। क्षमावाणी पर्वोपरान्त उनके द्वारा भेजे आशीर्वादात्मक पत्र मेरी अमूल्य निधि हैं। मेरी अल्पबुद्धि के अनुसार साहित्यकार/सम्पादक/लेखक/कवि/ समीक्षक/आलोचक समाज का सबसे प्रमुख समाजसेवी होता है। उसकी लेखनी ही मन की बात कहती है।

सुदीर्घ अवधि तक निरन्तर प्रभावी ढंग से लेखन-सम्पादन द्वारा सैकड़ों सुधीजनों को जोड़ना भी पुण्य का कार्य है। सहज, सरल, उदारमना, परदुखकातर, हितैषी, सिद्धान्तप्रिय लेखनी द्वारा साधु/समाज/साधक को मर्यादानुसार चलने की प्रेरणा/सीख देते वे हेडमास्टर भी दिखे और प्रशासक भी।

अपने तपस्वी जीवन द्वारा सबके प्रेरणा स्रोत रहे श्रद्धेय अजित प्रसादजी को विनम्र श्रद्धांजलि। उनकी निर्भीक पत्रकारिता को प्रणाम। लौह लेखनी को बारम्बार नमन।

मुझे विश्वास है आदरणीय डॉ. शशि कान्त जी, रमा कान्त जी, नलिन कान्त जी श्रद्धेय अजित प्रसाद जी के कार्यों को नए आयाम प्रदान करते रहेंगे।

- पुराना टेली. एक्स. के सामने गली में, कटनी

हमारे प्यारे 'टॉफी बाबा' जी

- कुमारी पलक जैन

जब भी मैं टॉफी बाबाजी के घर जाती थी तब वह मुझसे एक ही बात पूछते थे कि 'बेटे, आप कैसे हो और आपकी पढ़ाई कैसी चल रही है?" और हां, हर बार उनसे मुझे कुछ न कुछ सीखने को मिलता था। वह कहते थे कि किसी चीज को रटना नहीं चाहिए, बल्कि उसे समझना चाहिए। वह कहते थे कि अगर हमारा कुछ भी बुरा होता है तो भगवान हमारे अच्छे के लिए ही करते हैं। भले ही उन्होंने पी-एच.डी. वगैरह नहीं की थी, फिर भी वह बहुत अच्छे विद्वान थे। और हां, उनको हर विषय के बारे में जानकारी थी। बाबाजी जब हम बच्चों को किसी चींटा-चींटी को सताते हुए देखते थे तो मना करते थे। उन्हें झूठ से सख्त नफरत थी। वह बच्चों को प्यार भी बहुत करते थे। अक्सर वह हमारे घर आया करते थे और हमेशा हम सभी बच्चों के लिए टाफियां जरूर लाते थे। इसलिए हम बच्चों ने उनका नाम 'टॉफी बाबा' रख दिया था।

बाबाजी में 'विल-पॉवर' (Will Power) बहुत थी। वह हमेशा कहते थे कि समाज और परिवार के लिये अभी-भी मुझे बहुत कुछ करना है। इसीलिए वे अन्तिम सांस तक मृत्यु से लड़ते रहे। मेरे बाबाजी बता रहे थे कि मरने से दो दिन पहले ही उन्होंने एक लेख लिखाया था। आज उनके नहीं रहने पर उनकी ये अच्छाइयां हमें उनकी याद दिलाती हैं और कभी-कभी रुलाती भी हैं।

कहाँ छिपे हो प्यारे बाबा

- श्रीमती इन्दु कान्त जैन, फिरोजाबाद

जब पापा ने बताया कि **'शोधादर्श'** का अगला अंक छोटे बाबा जी की स्मृति में होगा, तो मैं अपने को रोक न सकी। बाबा जी के बारे में लिखने बैठी, तो लगा, वह हमसे दूर गये ही कब हैं? हमारी भावनाओं और कल्पनाओं में तो आज भी वह अपनी चिर परिचित मुस्कान के साथ विद्यमान हैं। उनके साथ बिताये हर पल, उनका व्यक्तित्व सभी तो साकार हो उठे।

अपनों का बिछोह क्या होता है, यह मैंने अपने दादी-बाबा को खोने के बाद जाना। किन्तु यह कैसा बिछोह है, जिसने मुझे उनके और भी करीब कर दिया। आज इतने वर्ष बीतने के पश्चात् भी मैं उन्हें अपने पास पाती हूँ। उनका सरल, सादगी से भरा मुस्कुराता हुआ चेहरा, उनका तेजवान, अद्भुत व्यक्तित्व आज भी हर सुख-दुख में मेरे लिये प्रेरणा बना है। उन्हें खोकर मुझे लगा शायद यह कमी अब कभी पूरी नहीं होगी।

किन्तु छोटे बाबा जी ने अपने भरपूर प्यार और ममता से कभी उन लोगों की कमी महसूस ही नहीं होने दी। जैसे ही उन्हें पता चलता कि मैं लखनऊ आयी हूँ। वह सवेरे मन्दिर से सीधे घर जा पहुँचते। उनके पास बच्चों के लिए टॉफिया होती थीं। कभी खोया खरीदकर भेज देते और मेरी मम्मी से कहते कि "बच्चे आये हैं आशा, कुछ मिठाई बना ले।" मैं उनसे मिलने जाती थी तो वह कस कर मेरा हाथ पकड़ लेते, जैसे कह रहे हों- "थोड़ा और रूक जा।" शब्दों से कम आँखों से वह अपने मन की हर बात कर लिया करते थे।

उनके व्यक्तित्व की जो बात मुझे सबसे ज्यादा प्रभावित करती थी, वह यह थी कि वह इस अवस्था में भी, इतने बीमार रहने पर भी, इतनी कठिन परिस्थितियों में भी, जबकि उन्होंने अपने जवान बेटों को खो दिया था, कभी भी अपना मानसिक सन्तुलन नहीं खोया। उनका धैर्य, साहस हम सभी को प्रेरणा देता रहेगा कि कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी मुस्कुराते हुए उनका सामना करो। संघर्ष ही जीवन है।

वक्त की आंधियों में भी
रहे रौशन एक दीप सम।
कहां जा छिपे 'प्यारे बाबा'
चले आओ, इन्तज़ार कर रहे बच्चे हम।।

-२१, दुली मोहल्ला, फिरोजाबाद

समाज को जगाने वाला अब नहीं रहा

- श्री संदीप कान्त जैन

यह कैसी विडंबना है कि इन्सान के गुणों का मूल्यांकन उसके इस संसार से जाने के बाद ही हो पाता है। आज जब मैं अपने छोटे बाबाजी (आदरणीय अजित प्रसाद जी) के इस संसार में लम्बी पारी खेलकर उनकी विदाई के बाद, उनकी याद करता हूँ, तो मुझे उनके व्यक्तित्व में कुछ ऐसे सद्गुण दिखाई पड़ते हैं जो अपनी विशिष्टता के कारण उन्हें दूसरों से अलग करते हैं और मैं उनके इन गुणों का ही स्मरण करने के लिए उद्यत हुआ हूँ।

उनके जिन गुणों ने मुझे प्रभावित किया वे थे- उनकी निर्भीकता, महत्त्वाकांक्षी प्रवृत्ति, चारित्रिक, वैचारिक एवं सैद्धान्तिक दृढ़ता, उनकी अध्ययनशीलता, तर्क-शक्ति एवं स्मरण शक्ति तथा यह कि एक सच्चे जैन की भांति हर परिस्थिति में समता-भाव बनाए रखना और स्वयं धैर्यवान एवं गंभीर रहते हुए दूसरों को भी धैर्य बंधाए रखना। लेकिन सबसे अधिक उनकी जिस बात ने मुझे प्रभावित किया वह थी उनकी अपने धर्म में गहरी आस्था और धर्म-समाज के प्रति समर्पित-भावना। यही कारण था कि उन्होंने अपनी **'अंतिम अभिलाषा'** (जो **शोधादर्श** ५३ में छपी है) में अगले जन्म में एक जैन कुल में ही जन्म लेने की इच्छा व्यक्त की थी। यद्यपि वह एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे और जीवन-भर विभिन्न सामाजिक-संस्थाओं के माध्यम से समाजसेवा करते रहे, तथापि वह अन्ध-श्रद्धालु नहीं थे अपितु खुले विचारों के थे और जैन धर्म के शुद्ध वीतराग स्वरूप को बनाए रखने के पक्षधर थे। उन्हें इस महान वीतरागी धर्म में किंचित् भी विकृति उचित नहीं प्रतीत होती थी और इस हेतु वह अपने जीवन के अंतिम क्षण तक चिंतित रहे और अपनी लेखनी के माध्यम से समाज को चेताते रहे एवं एक सच्चे पत्रकार के धर्म का निर्भयतापूर्वक, बिना किसी राग-द्वेष के, निर्वाह करते रहे।

उनका जैन धर्म एवं समाज को योगदान इसलिए और अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि उन्होंने उस समय विवेकहीन विघटनकारी तत्वों से लगभग अकेले लोहा लेते हुए समाज को जगाने और सावधान करने का उपक्रम किया, जब ये तत्व, जैन जागरण के फलस्वरूप पिछली बीसवी शती के प्रारंभ से लगभग सातवें दशक तक लगभग परास्त होकर, पुनः शक्तिशाली रूप से अपना सिर उठाने की कोशिश करने लगे थे। यह उनके जैन धर्म के सिद्धान्तों के प्रति दृढ़-श्रद्धान का ही प्रभाव था कि वह

निर्भयतापूर्वक जैनधर्म की शुचिता की रक्षा में जुट गए-बिना घातों-प्रतिघातों की परवाह किए हुए। अच्छे प्रयासों का परिणाम अच्छा ही आता है, चाहे थोड़ी देर से ही क्यों न हो। और यही हुआ भी, समय के साथ समाज में जागृति आने लगी और शिथिलाचारी प्रवृत्तियों का चहुं ओर विरोध शुरू हो गया, यहां तक कि शिथिलाचार-पोषक तथा 'उपगूहन' के नाम पर शिथिलाचार को ढकने का प्रयास करने वाली संस्थाओं तथा उनके मुखपत्रों में भी। यही बाबाजी का अभीष्ट भी था कि धर्म के मार्ग में शुचिता बनी रहे, उनका किसी से कोई व्यक्तिगत द्वेष नहीं था अपितु समाज के अधिकतर प्रमुख-व्यक्तियों से तो उनके अच्छे व्यक्तिगत- पारिवारिक संबंध थे। कदाचित् बहुत कम लोगों को पता होगा कि वह महासभा के वर्तमान अध्यक्ष महोदय को सामाजिक-कार्यों में आगे लाने में प्रारंभिक वर्षों में बहुत प्रेरक रहे और 'जैन गज़ट', जो लगभग बन्द सा था, अजमेर से लखनऊ लाकर उसके पुनर्प्रकाशन एवं नये महासभा-कार्यालय की व्यवस्था में उन्होंने काफी समय तक सक्रिय सहभागिता की।

वैसे तो बाबाजी ने एक सफल जीवन जीकर अपने समस्त पारिवारिक-सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करके महाप्रयाण किया, परन्तु अफसोस यही रहेगा कि समाज की स्वान्तः सुखाय सेवा करने वाला, समाज को जगाने वालों में अग्रिम-पंक्ति का एक कर्तव्य-परायण व्यक्ति अब नहीं रहा और समाज जो इस मामले में पहले से ही निर्धन था, अब और निर्धन हो गया।

याद ही रह गई बस

- श्री मधुरिम जैन

हमारे बड़े बाबाजी मुझे याद बहुत आते हैं क्योंकि वह हम बच्चों को बहुत प्यार करते थे। मुझे तो खास तौर से बहुत ही स्नेह देते थे। मेरी हर बर्थ डे पर स्वयं आकर मुझे आशीर्वाद देते थे तथा जब भी घर पर आते थे, हम बच्चों के लिए ढेर सारी टाफियां लाते थे। इसी वजह से हम लोग उन्हें प्यार से टॉफी बाबा कहकर बुलाते थे। साल का पहला दिन पहली जनवरी को उनका बर्थ डे होता था। हम लोग जब उनको बर्थ डे विश करने जाते थे तो वह हमें आशीर्वाद देते और हमारा पूरा साल अच्छा बीतता था। अब उनके न रहने पर पहली जनवरी को वह हमें बहुत याद आयेंगे।

वात्सल्य मूर्ति आदरणीय छोटे बाबाजी

- श्रीमती निधि जैन

जब हमारे पापाजी (श्री रमा कान्त जी) ने बाबाजी की स्मृति में **'शोधादर्श'** में विशेष अंक के लिये संस्मरण लिखने की बात कही तब मुझे महसूस हुआ कि हमारे बाबाजी तो वाकई हमारे बीच नहीं रहे लेकिन उनका बहुमुखी व्यक्तित्व हमारे इर्द-गिर्द ही कहीं मौजूद है।

जब मैं विवाह के उपरान्त इस परिवार में आयी तो मेरे ददिया श्वसुर का पहले ही देहान्त हो चुका था। मैंने उनका मात्र चित्र देखा था परन्तु ददिया श्वसुर के रूप में वास्तव में आदरणीय छोटे बाबाजी का स्नेह ही पाया।

यद्यपि मैं वैष्णव परिवार से आयी थी, किन्तु यह बाबाजी की सत्प्रेरणा का ही परिणाम है कि मैं जैन धर्म की विशेषताओं को बड़ी ही सरलता से समझ सकी। अब मुझे यह लगता ही नहीं कि मैं किसी अन्य परम्परा से आयी हूँ।

उनके व्यक्तित्व की सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि वह हर उम्र के लोगों के साथ बहुत ही अच्छा ताल-मेल बैठा लेते थे।

मुझे याद है कि जब मैं बीमार थी तब वह मेरा हाल चाल लेने नियमित रूप से मेरे कमरे तक छड़ी टेकते हुए आते थे और तमाम तरह की आयुर्वेदिक औषधियां बताते थे और लाकर भी देते थे। उनकी छड़ी की आवाज मुझे बड़ी प्रेरणा प्रदान करती थी। उनका छड़ी टेक कर कमरे में मेरे हाल चाल पूछने आना मेरी बीमारी को आधा कर देता था। उनका यह वात्सल्यपूर्ण एवं प्रेरणाप्रद व्यवहार बताता था कि मनुष्य की ज़िन्दगी में अनेक विषम परिस्थितियां आती हैं जिनका हमें धैर्यपूर्वक सामना करना चाहिये। उनके स्नेहाशीष एवं प्यार भरे व्यवहार ने मुझे उनकी पुत्री होने का एहसास भी कराया।

आदराणीय बाबाजी के बहुआयामी व्यक्तित्व को एक लेख के कुछ शब्दों में बांधना कठिन है। आज हम सभी को उनकी छत्रछाया के न होने का एहसास हो रहा है। और बार-बार ये पंक्तियां याद आ रही हैं-

" चिट्ठी न कोई संदेश, जाने कौन सा वह देश, जहां आप चले गये। "

- ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ

श्री अजित प्रसाद जैन अष्टक

प्रथम जनवरी आपने,
धरे धरणि पर पाँव।
गीतों की अनुगूंज से,
प्रमुदित सारा गाँव।।१।।

पालन-पोषण में जगे,
जैनों के संस्कार।
मंदिर जाना नियम से,
किये नित्य उपकार।।२।।

सचिवालय से आ जुड़े,
किया प्रशासन-काज।
बिना दाग पूजे गये,
किया निरापदराज।।३।।

सामाजिक सेवाकरी,
किया उजागर नाम।
सचिवालय से मुक्त हो,
नहीं किया विश्राम।।४।।

संपादक बन कर किया,
अनाचार का अन्त।
सम्मानित बहुविधि हुये,
पुलकित हुये दिगन्त।।५।।

तुमने हृदयी बन किया,
वरण हृदय का रोग।
अंतिम क्षन तक जूझकर,
किया आयु का भोग।।६।।

अन्तकाल नवकार का,
किया स्वयं उच्चार।
जाने से पहिले किया,
त्याग सकल संसार।।७।।

याद आपको कर रहे,
सभी वर्ग के लोग।
अजित अजित बनकर जिये,
मरे अजित संजोग।।८।।

- विद्यावारिधि डॉ. महेन्द्रसागर प्रचंडिया,
अलीगढ़

अजित प्रसाद जैन ने जग में कीर्ति ध्वजा फहराई

एक जनवरी अठारह को आये अजित महान,
और जून पच्चीस पांच को जग से किया प्रयाण।
जिये सतासी वर्ष जगत में बहुत प्रतिष्ठा पायी,
अजित प्रसाद जैन ने जग में कीर्ति ध्वजा फहराई।
जैन संस्थाओं से जुड़कर व्यापक सुयश कमाया,
योगदान दे अपना पूरा सेवा धर्म निभाया।
जैन गज़ट के रहे प्रकाशक समाचार सम्पादक
संस्कृत एकेडमी के मानद कोषाध्यक्ष रहे तुम।
जहां रहे जी भर सेवा की परम सफलता पायी।
अजित प्रसाद जैन ने जग में कीर्ति ध्वजा फहराई।
'महावीर निर्वाण समिति' के शासकीय अधिकारी
रहकर सेवा जैन जगत की तुमने की सुखकारी।
तीर्थंकर महावीर स्मृति का केन्द्र गठित करवाया
शासन से अनुदान प्राप्त कर ध्रौव्य फण्ड बनवाया।
शोध पुस्तकालय स्थापित किया परम सुखदायी।
अजित प्रसाद जैन ने जग में कीर्ति ध्वजा फहराई।
'शोधादर्श' पत्रिका का सम्पादन कार्य संभाला,
साहित्यिक सोपान बन गया उसका मधुरस प्याला।
नवयुग का समाज उत्प्रेरक चेतनशील प्रकाशन,
शोधपूर्ण लेख़न सामग्री और विविध ज्ञानार्जन।
विविध पुरस्कारों ने हर्षित मालायें पहनाई
अजित प्रसाद जैन ने जग में कीर्ति ध्वजा फहराई।
थे निर्भीक कथन लेखन में थे यथार्थ ही कहते,
नहीं चापलूसी करते थे नहीं किसी से डरते।
खुला हुआ था हृदय तुम्हारा सबका स्वागत करते,
यथाशक्ति तुम कष्ट निवारण सबका ही थे करते।
काया नष्ट हो गयी फिर भी कीर्ति नहीं जल पायी।
अजित प्रसाद जैन ने जग में कीर्ति ध्वजा फहराई।

- डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशांत'
लखनऊ

पारदर्शी- काव्यांजलि

(मनहरण कवित्त)

(१)

अजित प्रसाद जैन, मधु-सम बोले बैन,
दया-प्रेम भरे नैन, मिले नहीं सानी है।
माता-पिता के दुलारे, परिजनों के वे प्यारे,
मेरठ शहर जन्मे, सादगी निशानी है।
सच्चे समाज-सेवक, युवा-पथ-प्रदर्शक,
अहिंसा के प्रचारक, आध्यात्मिक ज्ञानी हैं।
शोधादर्श-सम्पादक, निर्भीक कलमकार,
'पारदर्शी'-जीवन में, रहे स्वाभिमानी हैं।

(२)

किया निष्काम कर्म, राजकीय सेवा-धर्म,
लखनऊ कर्मस्थली, सेवाएं महान हैं।
पाए अनेकों सम्मान, जिन-शासन की शान,
अजित प्रसाद जैन, मूर्धन्य-विद्वान हैं।
सत्यनिष्ठ प्रशासक, पाए उच्चतम-पद,
छू न पाया जीवन में, कभी अभिमान है।
सम्पादक-पत्रकार, प्रसिद्ध साहित्यकार,
'पारदर्शी' पुरस्कार, बने पहिचान हैं।

(३)

ज्ञानवन्त-गुणवन्त, उपलब्धियाँ अनन्त,
उच्च विचारों के धनी, ज्ञान के आगार हैं।
बिना किसी भेद-भाव, दिया ज्ञान का ही दान,
भाया न शिथिलाचार, रहे निर्विकार हैं।
दो हजार पांच, जून-पच्चीस को स्वर्गवास,
शोकाकुल समाज और, पूरा परिवार है।
श्रद्धा से करें नमन, अजित जी के चरण,
'पारदर्शी'-काव्यांजलि, करलें स्वीकार हैं।

- सन्त ॐ पारदशी, उदयपुर

श्रद्धांजलि

'अजित' अजित रहे सदा, रिपु अज्ञान मिटाय,
संग सहोदर 'ज्योतिश्री' बोध-शोध संकाय।
अष्ट दशक कर्तृत्व के, भूल न सकहि समाज,
अध्यवसायी प्रकृति से सम्यग्ज्ञान जहाज।
'जैन गज़ट' सेवक रहे, किया प्रकाशन भव्य,
महासभा ऋणी आपकी, उद्योदित भवितव्य।
'शोधादर्श' का लक्ष्य शुचि, सम्पादकहि प्रधान,
चर्तुसंघ कालुष्य हर, लेखन भावमहान।
आगम अनुभव पारखी, वृष जोड़ा विज्ञान
वात्सल्य की मूर्ति थे, वाणी मधुर सुहान।
जीवन जीया शान से, कर्मठ रहे अतीव
धर्म, अर्थ, यश, मान सुख, प्रत्युपकार सजीव।
श्रद्धांजलि व्यक्तित्व को, अमर रहे कृतित्व,
आत्म दिवंगत शांति ले, 'विमल' नमन कर्तव्य।

– डॉ. विमला जैन 'विमल', फिरोजाबाद

विनयांजलि

अ– अपनी लेखनी की अमिट छाप छोड़ी
जि– जिसे भुला नहीं सकता युगों युगों तक कोई
त– तन्मय हो करते थे सम्पादन शोधादर्श का
प्र– प्रशंसा और अप्रशंसा से सदैव रहे निर्लिप्त
सा– सादा जीवन जिया, समन्वय वाणी को साथ लिया
द– दक्षतापूर्ण पैनी कलम चला, बने कलम के सिपाही
जै– जैन जगत हृदय से करता आप पर नाज है
न– नहीं ऐसा विख्यात पत्रकार समाज में आज है
ल– लगता नहीं वे अब भी हमसे दूर हैं
ख– खनकती आज भी उनकी कलम की गूंज है
न– नहीं भुला पायेंगे दिल से उन्हें हम कभी
ऊ– ऊपरी दिखावा नहीं, ये मेरे मन की बात है सही

– श्रीमती शैल बंसल, जयपुर

श्रद्धा-सुमन

श्रद्धेय अजित प्रसाद जैन जी के महाप्रयाण से स्तब्ध उनके अनेक परिचितों, स्नेहीजनों, शोधादर्श के सुधी पाठकों एवं विद्वज्जनों से हमें भारी संख्या में सामाजिक, साहित्यिक एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में उनके योगदान को रेखांकित करते हुए और उनके व्यक्तिगत गुणों का स्मरण करते हुए भावभीनी श्रद्धांजलियाँ व शोक संवेदना संदेश प्राप्त हुए हैं। सभी ने उनकी क्षति अपूरणीय बताई है और दिवंगत आत्मा की शान्ति की कामना करते हुए हम स्वजनों को धैर्य बंधाया है। हम सभी महानुभावों के हृदय से आभारी हैं कि दुख के इन पलों में उन्होंने हमें अपना समझा और दिवंगत मनीषी को अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये। सुधी सज्जनों के पत्रों में प्राप्त श्रद्धा-सुमन नीचे प्रस्तुत हैं।

- शशि कान्त
रमा कान्त

श्री अखिल बंसल, सम्पादक- समन्वय वाणी, जयपुर : श्री अजित प्रसाद जी जैन ने सच्चे अर्थों में जिनवाणी माँ की सेवा निस्वार्थ भाव से की और **शोधादर्श** व **समन्वय वाणी** के माध्यम से पत्रकारिता के उच्च मापदण्ड स्थापित किए। हमने सच्ची बात कहने व लिखने वाला निर्भीक पत्रकार खो दिया है। **समन्वय वाणी** को उन्होंने जो प्रखरता एवं विश्वसनीयता प्रदान की उसे कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता।

डॉ. अनंग प्रद्युम्न कुमार, ऊधमसिंह नगर (रुद्रपुर) : ऐसा कम ही होता है कि कोई व्यक्ति अपने जीवन की सम्पूर्ण समयावधि सुनियोजित ढंग से परिवार और अपने समाज की सेवा में व्यतीत करे, परन्तु श्री अजित प्रसाद जी अपने जीवन को अंतिम क्षण तक सार्थक ढंग से जीते रहे और **शोधादर्श** को श्रेष्ठ दिशा-बोध देते रहे। उनके ही उद्देश्यपरक पुरुषार्थ और दिशा निर्देशन में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र लखनऊ एक शोध संस्थान बनकर उभरा। जैन समाज आपके योगदान को कभी नहीं भुला पाएगी।

डॉ. अभय प्रकाश जैन, ग्वालियर : अभी चार दिन पूर्व जयपुर अखिल बंसल से मिला तो पता चला चाचा जी अजित प्रसाद जैन का निधन हो गया है- तो सहसा विश्वास नहीं हुआ। वे सदा समाज को दिशा प्रदान करते रहे। विगत दशक में उन्होंने जैन जन जीवन के उन तमाम पहलुओं पर लिखा- जिन पर सम्पादक लेखक लिखने में खौफ खाते थे। वे कभी खौफजदा नहीं हुए और मरते दम तक लड़ते रहे। उन्हें आगे भी बहुत कुछ करना था जिसे आपको अब पूरा करना है।

नियति का यूं अचानक वाम हो जाना कितना विदग्धकारी है। उन्होंने सब कुछ खोकर भी समाज को जी भर कर दिया- आने वाले लेखक संपादक उनसे प्रेरणा लेते

रहेंगे। उनको वक्र दृष्टि से देखने वाले आज नम आंखों से श्रद्धाञ्जलि दे रहे हैं। उनको मेरे शतशः प्रणाम।

श्री आदित्य जैन, कानपुर : आदरणीय चाचा जी के निधन से हम सभी को बहुत बड़ी क्षति हुयी है। वह हमारे मार्गदर्शक थे। जैन समाज ने धर्म व समाज का सच्चा हितचिन्तक व सजग प्रहरी खो दिया है। जीवन पर्यन्त वह धर्म व समाज के कल्याण के लिए समर्पित रहे। उनकी लेखनी समाज को अपप्रवृत्तियों से सदैव सचेत करती रही। उनके लेखन में पक्ष विशेष का समर्थन नहीं था वरन् आगमानुकूल तार्किक तथ्यों का ही समर्थन होता था। किसी प्रकार का दबाव उन्हें विचलित नहीं कर सका। जैन समाज के निर्भीक पत्रकारों में उनका मान सदैव अग्रगण्य रहेगा।

वस्तुतः वह केवल पत्रकार ही नहीं थे, उनकी दृष्टि शोधपरक थी। उनके अग्रज डॉ. ज्योति प्रसाद जी के अनुरूप उनका अध्ययन विशद तथा गम्भीर था। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति की स्थापना तथा उसके विकास में उनका महत्वपूर्ण योगदान था।

डॉ. ऋषभचन्द्र जैन, वैशाली (मुजफ्फरपुर) : श्रद्धेय अजित प्रसाद जी जैन ने आजीवन अपनी कलम से जैन समाज, संस्कृति और धर्म को नई दिशा दी। **जैन गज़ट, समन्वय वाणी**, और **शोधादर्श** के सम्पादक के रूप में उनके अपूर्व योगदान का समाज ऋणी है। वे निर्भीक, निष्पक्ष और ओजस्वी पत्रकार तथा विद्वान थे।

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र, लखनऊ और **शोधादर्श** को श्री जैन ने अपने खून पसीने से सिंचित कर पल्लवित-पुष्पित किया है।

डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव, भिलाई/लखनऊ : **शोधादर्श** के माध्यम से मैं उनके बहुआयामी ज्ञान से यत्किंचित् परिचित हुआ। वे स्पष्टवक्ता, निर्भीक समीक्षक और सत्पथ-प्रदर्शक थे। उन्होंने धर्म को, उसके आन्तरिक और व्यावहारिक पक्षों को, समय-समय पर उसके विषय में पनपे वाद-विवादों को और उसमें यत्र-तत्र उभरती विकृतियों को शालीन किन्तु दृढ़तापूर्वक स्पष्ट किया तथा निपटाया। वे मितभाषी और मृदुभाषी दोनों ही थे। इसीलए वे सदैव सर्वत्र समादृत हुए।

Sri A. L. Sancheti, Jodhpur : I am much grieved to learn that Shri Ajit Prasad ji Saheb has left for heavenly abode. He was ably continuing the spiritual tradition of Dr. Jyoti Prasad ji including Shodhadarsh by his hard work till the end.

डॉ. कुन्दन लाल जैन, दिल्ली : वे जैन समाज के निर्भीक मार्ग दृष्टा थे। वे सर्वप्रिय और अजातशत्रु थे। वे अपनी बात तर्क पूर्ण ढंग से निर्भयता पूर्वक प्रस्तुत करते थे। कबीर के शब्दों में वेः-

"कबिरा खड़ा बजार में मांगे सबकी खैर।
न काहू की दोस्ती न काहू सों बैर।।"

श्री कुलभूषण कुमार जैन, सम्पादक जैन प्रदीप, देवबन्द : संसार में अनेक मनुष्य जन्म लेते हैं। कुछ दिन रैन बसेरा करके चले जाते हैं। उनमें से कुछ अपने पुरुषार्थ, संयम, समता, सहिष्णुता आदि सद्गुणों की सुवास फैलाकर पार्थिव देह को छोड़कर परलोक वासी हो जाते हैं, किन्तु संसार में वे अपने सत्कार्यों से महिमावन्त बन जाते हैं। आदरणीय श्री अजित प्रसाद जी इसी प्रकार के व्यक्ति थे। वे भौतिक दृष्टि से हमारे बीच नहीं हैं, किन्तु उनकी प्रेरणा हमारा पथ प्रदर्शन करती रहेगी।

डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी, औरैया : श्री अजित प्रसाद जी जैन के महाप्रयाण के समाचार से महती वेदना हुई। उनकी सारस्वत सेवाएं सारस्वत जगत एवं जैन जगत में सदैव स्मरण की जाएंगी।

श्री कैलाश मड़वैया, भोपाल : आदरणीय अजित प्रसाद जैन ऐसे महाव्यक्तित्व के चले जाने से हृदय का दुखी होना स्वाभाविक है। १५ जनवरी, ०५ का उनका **शोधादर्श** में सम्पादकीय 'समाधिमरण' जैसे पूर्वाभास था। वे सचमुच व्यावहारिक एवं खुले हृदय के विचारक थे। ऐसे कलमकार एवं ज्योति-स्तम्भ को मेरे एवं **अनेकान्त परिवार** के शत शत प्रणाम।

डॉ. गोकुल चन्द्र जैन, डॉ. श्रीमती सुनीता जैन, आरा : वे एक कर्मठ, निर्भीक और चिन्तक विद्वान् थे। **शोधादर्श** के सम्पादक के रूप में उनका एक विशिष्ट व्यक्तित्व समाज के सामने आया। जाते-जाते भी वे समाधिमरण-सल्लेखना पर पुनश्चर्चा की शुरुआत कर गये।

डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा, सम्पादक दिशा बोध, कोलकाता : आदरणीय श्री अजित प्रसाद जी के आकस्मिक अवसान से हार्दिक दुख है।

श्री जगाती नर्मदा प्रसाद जैन, सागर : जैन समाज ने अपना एक सुदृढ़ स्तंम्भ खो दिया। जैन समाज को सुमार्ग पर चलने की प्रेरणा एवं बल, साहस देने के लिए ऐसे ही व्यक्त्वि की नितांत आवश्यकता है।

श्री जमनालाल जैन, सारनाथ : उनका लेखन एक ऐसा दर्पण था जिसमें सामाजिक, धार्मिक विकृतियाँ, विसंगतियां साफ साफ झलकती थीं! उनमें तर्क, श्रद्धा और यथार्थ का अद्भुत संगम था। स्पष्टवादी और यथार्थवादी तो वे थे ही। **शोधादर्श** की टिप्पणियाँ और विमर्श समाज को चेताती थी। अब ऐसा आदर्श और निर्भीक चिन्तक जैन समाज में तो दिखाई नहीं देता।

श्री डालचंद जैन, सागर : श्री अजित प्रसाद जी जैन ने **शोधादर्श** के माध्यम से जैन दर्शन, पुरातत्व और इतिहास की विलुप्त जानकारी उपलब्ध कराकर जैन दर्शन

का गौरव बढ़ाया है। उनके महाप्रयाण से जैन समाज में लब्धप्रतिष्ठित साहित्यकार, संपादक की अपूरणीय क्षति हुई है।

श्री ताराचन्द प्रेमी, फिरोजपुर झिरका : श्रद्धेय अजित प्रसाद जी का वियोग समाज में अत्यधिक दुखद है। उनकी साहित्यिक सेवाएं सदैव स्मरण की जायेंगी।

श्री तारा चन्द्र जैन बख्शी, जयपुर : शोधादर्श में उनके चिन्तन कण में दिये गये शब्द उनकी पहचान बन चुके थे। उनके शब्द सिर्फ समाचार नही बनते थे वरन पाठकों की तड़प बन जाते थे। आपके शब्द व चिन्तन के पीछे एक मकसद होता था। आप किसी पंथ, संत या साधु के गुलाम नहीं थे। आपकी विचारधारा पूर्णतः स्वतंत्र थी।

श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', लखनऊ : आदरणीय श्री अजित प्रसाद जी जैन के निधन से साहित्य जगत को अपूरणीय क्षति हुई है। वे कुशल लेखक व कर्मठ समाज सेवी एवं सुयोग्य सम्पादक थे।

डॉ. नन्दलाल जैन, रीवा : श्री अजित प्रसाद जी की विचारधारा से, सम्पादकीय एवं टिप्पणियों से मैं सदैव प्रभावित रहा हूँ। एक प्रगतिशील विचारधारा के संवाहक के अभाव की क्षतिपूर्ति कठिन ही है।

पं. पद्मचन्द्र शास्त्री, नई दिल्ली : भाई अजित प्रसाद जी का स्वर्गवास जानकर अपार दुख हुआ। ऐसे विचारक समाज को जागरुक करने वाले अब कहाँ हैं, जो उनके स्थान की पूर्ति कर सकें।

डॉ. परमानन्द जड़िया, लखनऊ : श्री अजित प्रसाद जैन लम्बे समय से जरा व्याधि से पीड़ित थे और उन्हें विदित था कि जीवन का अवसान निकट है तथापि उन्होंने एक कर्म-योगी की भाँति अपने अन्तिम समय तक **'शोधादर्श'** के सम्पादन का कार्य जारी रखा। वे रूढ़िवाद और अंधानुकरण में विश्वास नहीं रखते थे। अपने गहन अध्ययन तथा पांडित्य के लिये वे सदैव याद किये जायेंगे।

डॉ. पूर्णचन्द्र जैन, लखनऊ : अजित प्रसाद जी ने हमेशा समाज एवं राष्ट्र के लिये अपने को समर्पित रखा। आयुर्वेद की विभिन्न कमेटियों में अपनी उपस्थिति द्वारा उ. प्र. आयुर्वेदिक कालेजों की स्थिति सुधारने एवं आयुर्वेदिक अकादमी की स्थापना में उनका योगदान आगामी समय में भी भूला नहीं जायेगा।

लखनऊ में सामाजिक बुराइयों को दूर करने की प्रवृत्ति में वे प्रमुख कर्णधार रहे। ऐसे सुधारक व्यक्ति को विस्मृत करना किसी के लिये संभव नहीं है।

पं. प्रेमचन्द्र जैन 'दिवाकर', डीमापुर : जानकर दुख हुआ कि लखनऊ में **"जैन गज़ट"** की निशानी मेरे मित्र श्री अजित प्रसाद जी का स्वर्गवास हो गया है।

बाबू जी सरल, स्नेही और योग्य सलाहकार के रूप में मेरे देखने-जानने में आये थे। मुझे उनके नियंत्रण में **जैन गज़ट** के सह संपादक के रूप में ६ माह जैन गज़ट कार्यालय लखनऊ में कार्यरत रहने का अवसर मिला था। बाबू जी की कर्मठतापूर्ण स्नेही वाणी मुझे उनके व्यक्तित्व से परिचित कराती थी। मेरे कानों में उनकी प्रिय ध्वनि आज भी प्रतिध्वनित होती है। श्री अ. भा. वर्णी स्नातक परिषद, सागर स्व. बाबू जी के प्रति शोक संवेदना व्यक्त करती है।

श्री ब्रहमराज मित्तल, हांसी : निर्भीक पत्रकारिता के प्रतीक श्री अजित प्रसाद जैन के निधन पर विनम्र श्रद्धान्जलि अर्पित करता हूँ।

डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', दमोह : एक तटस्थ, निर्भीक, सतत जागरुक, कर्मठ व्यक्तित्व को हम सबने खो दिया है। उनकी सूझबूझ, क्रियाशीलता और उपलब्धियाँ 'अनन्वय अलंकार' की कोटि में अधिष्ठित होती हैं। सामाजिक जड़ता, कुरीतियों और शिथिलाचार को दूर करने की दिशा में वे सदैव सचेष्ट रहे हैं। उन जैसी स्पष्टवादिता और संस्कृति संरक्षण तथा सम्वर्द्धन की प्रकृति एवं वैसे ही प्रयास आज बहुत विरले दिखाई देते हैं।

उनका देहावसान अखिल भारतीय क्षितिज पर बहुत बड़ी रिक्तता छोड़ गया है, जिसकी पूर्ति निकट भविष्य में कठिनतर है। हम स्वयं तथा अपने शोध केन्द्र की ओर से श्रद्धेय मनीषीप्रवर श्री अजित प्रसाद जी की पावन स्मृति को शतशः स्मरण कर प्रणाम करते हैं।

डॉ. मालती जैन, मैनपुरी : आदरणीय चाचाजी श्री अजित प्रसाद जैन के निधन का समाचार हृदय को व्यथित कर गया। कटु सत्य को दृढ़ता और निर्भीकता से उजागर करने का नैतिक साहस विरले व्यक्तियों में होता है। श्रद्धेय अजित प्रसाद जी इस नैतिक साहस के धनी थे। जीवन के अंतिम क्षणों तक उनका गहन चिन्तन एवं निर्भीक लेखन गतिशील रहा। ज्योति परिवार की एक और देदीप्यमान दीपशिखा अस्त हो गई है, पर उसने सारी जिन्दगी उज्जवल प्रकाश की जो किरणें बिखेरी हैं वे अज्ञान के निविड़तम को सदैव विनष्ट करती रहेंगी। मर कर भी वे अमर हैं।

वे जिन उदात्त जीवन मूल्यों के लिए जिए उन्होंने उन्हें एक निर्भीक पत्रकार, एक प्रखर चिन्तक, समर्पित समाज सेवी और सबसे बढ़कर एक सहृदय, कर्त्तव्यनिष्ठ इन्सान के रुप में प्रतिष्ठित कर दिया था। उन्होंने अपने पीछे छोड़ा है - सच को सच कहने का नैतिक साहस जो अदम्य था, दृढ़ संकल्प जिसे मृत्यु की विभीषिका भी विचलित न कर सकी। मृत्यु से तीन दिन पूर्व उनके द्वारा लिखाया गया सम्पादकीय इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

आप विस्मृत नहीं विश्वास हैं, सम्मुख नहीं पर पास हैं।
ज़िन्दगी के हर तिमिर में, आप ही तो प्रकाश हैं।।

श्री मिलाप चन्द डंडिया, जयपुर : श्री अजित प्रसाद जी चोटी के विद्वान थे। उन्होंने आपके परिवार की गौरवमयी विद्वत् परम्परा को जिस तन्मयता व समर्पण से आगे बढ़ाया वह जैन समाज के इतिहास में सदैव अंकित रहेगी।

'समन्वय वाणी' के सम्पादक मण्डल से जुड़े होने के कारण इस पत्रिका के विकास व पत्रिका द्वारा अर्जित प्रतिष्ठा में उनके योगदान से मैं भली भांति परिचित हूँ। **समन्वय वाणी** के पाठक, सम्पादक और प्रकाशक उनको सदैव श्रद्धा से स्मरण करेंगे।

श्री मुकुल मोतीलाल 'विजय', कटनी : श्री अजित प्रसाद जैन लखनऊ का नाम जैन साहित्य जगत में एक अनूठे व्यक्तित्व का परिचायक है। बचपन से जैन जगत की अनेक पत्रिकाओं का अध्ययन पठन करता आ रहा हूँ, इनमें **शोधादर्श** पत्रिका ऐसी है जिसे मैं बहुविध सामग्री सँजोए, शोधछात्र-छात्राओं के निमित्त श्रेष्ठ पत्रिका मानता हूँ। परम आदरणीय सम्पादक श्री अजित प्रसाद जी के आशीर्वादात्मक पत्रों का अवलोकन कर मैं प्रसन्नता से भर जाता हूँ। ये पत्र जहाँ उनका उत्कट स्नेह, आत्मीयता तथा मार्गदर्शन देते हैं वहीं दूसरी ओर नवीन तथ्यों का सम्पूर्ण अध्ययन करने की सीख भी देते हैं। **शोधादर्श** में उनके सम्पादकीय जैन समाज के सभी वर्गों को प्रेरणा देते रहे हैं। शिथिलताओं पर जब वह फटकार लगाते तब एक सधे, निष्कपट आलोचक की भाँति उपदेश देते प्रतीत होते हैं तब उनकी कलम का जादू पठनीय होता है। वे पत्रकारिता क्षेत्र के आदर्श शिखर पुरुष थे। ऐसे मनस्वी व्यक्तित्व को बारम्बार नमन।

श्री रमेश चन्द्र जैन, फिरोजाबाद : बाबा जी आदरणीय श्री अजित प्रसाद जी के निधन से हमारा परिवार असीम वेदना एवं कष्ट का अनुभव कर रहा है। जीवन-मृत्यु प्रकृति के शाश्वत नियम हैं, लेकिन एक कर्मठ, साहित्यिक एवं समाजसेवी सम्बन्धी का बिछोह तो निश्चित रूप से दुःखकारी होता ही है।

श्री ललित कुमार नाहटा, सम्पादक स्थूलिभद्र सन्देश, नई दिल्ली : जैन समाज ने एक निर्भीक मार्गदर्शक व विद्वान निष्पक्ष लेखक खो दिया।

श्री लाल चन्द्र जैन, टिकैतनगर (बाराबंकी) : पिछले लगभग ३० वर्षों से अनेक सामाजिक, धार्मिक, तीर्थों एवं वैचारिक मंचों पर मेरा भाई अजित प्रसाद जी से जुड़ाव रहा है। पूर्वाग्रहमुक्त शिथिलाचार-कुरूढ़ियों, आडम्बरों के मुखर विरोधी स्वरों से वह जैन समाज को निरंतर सचेत करते रहे हैं। युक्ति-युक्त, तर्कपूर्ण, विवेक के साथ

सहज शब्दों में उनकी लेखनी प्रेरित करती रही है। उनका अभाव मन को कचोटता सा है।

प्रा. सौ लीलावती जैन, सम्पादिका- धर्म मंगल, पुणे : श्री अजित प्रसाद जी जैन के प्रत्यक्ष दर्शन का योग नहीं हुआ, परन्तु उनके पत्राचार द्वारा हमें हमेशा मार्गदर्शन मिलता रहा। वे एक जीवित लेखक थे। खरी-खरी लिखते थे। ऐसे निर्भीक कलम के धनी इस दुनिया से उठकर जा रहे हैं, जैन पत्रकारिता के जगत के एक सूर्य का अस्त हो गया सा लगता है।

श्रीमती विमला मोतीलाल जैन 'विजय', कटनी : **शोधादर्श** एवं **समन्वय वाणी** के सम्पादक श्री अजित प्रसाद जैन के अवदान पर जब दृष्टिपात करते हैं तो पाठक यह अनुभव करते हैं कि अथाह ज्ञान होते हुए भी वह स्वयं को 'मेरी अल्पबुद्धि के अनुसार' ही कहते, लिखते रहे। अति प्रशंसा उन्हें प्रिय नहीं थी। वह सादा जीवन उच्च विचार की परिधि में ही रहना पसन्द करते थे।

श्री वीरन्द्र सिंह लोढा, सम्पादक श्वेताम्बर जैन, आगरा : पूज्यवर श्री अजित प्रसाद जी सा. का निधन पूरे जैन समाज की अपूरणीय क्षति है।

श्री वेद प्रकाश गर्ग, मुजफ्फरनगर : श्री अजित प्रसाद जी का व्यक्तित्व कर्मठता का आदर्श है और उनकी कर्त्तव्य परायणता तो प्रत्यक्ष उदाहरण ही है, जो हम सबके लिए अनुकरणीय है। उन्हें हर समय अपने कर्त्तव्यबोध का ध्यान रहता था। इसी से वे अपने अंतिम समय तक निर्भीकता पूर्वक अपने दायित्वों का निर्वहन करते रहे। प्रशासनिक क्षेत्र रहा हो या समाजसेवा का वे कभी अपने पथ से विचलित नहीं हुए। उन्होंने साहित्य एवं समाज की जो सेवा की है, वह वंदनीय है।

श्री शान्तिलाल जैन बैनाड़ा आगरा : **जैन गज़ट** से श्री अजित प्रसाद जी जैन का दुखद मृत्यु समाचार पढ़कर चित्त में अतीव खेद हुआ। थोड़े समय से उनसे पत्र-व्यवहार चलता रहता था।

Sahu Shailendra Kumar Jain, Khurja : Only from Shodhadarsh received today, I knew that Bhaisaheb Ajit Prasad Ji completed his journey and left the rotton body.

I have a faith (the thought is borrowed from the literature of Theosophical Society) that Bhaisaheb would come again amongst us and would serve the Jinvani.

श्री सनत जैन, रायपुर : उनके लेख एवं सम्पादकीय बहुत ही निर्भीक एवं ज्ञानवर्द्धक होते थे। उनका निधन जैन समाज के लिये एक बहुत बड़ी क्षति है। उनसे

मिलने का सौभाग्य तो नहीं मिल सका था लेकिन उनके एक-दो पत्रां ने मुझे काफी प्रेरित किया था।

पं. सरमन लाल जैन दिवाकर, सरधना : श्री अजित प्रसाद जैन के निधन से जैन पत्रकारिता अनाथ सी हो गई। आप निडरता-निर्भीकता-निष्पक्ष-आगमानुसार बिना दबाव के जितने भी पत्रों के सम्पादक रहे, लिखते रहे। आपने जीवन भर कुरीतियों-पंथवादों-कुप्रथाओं के विरोध में लिखकर समाज को स्वच्छ एवं स्वस्थ्य राह प्रदान की।

श्रीमती सितारा जैन, जबलपुर : श्री अजित प्रसाद जैन के स्वर्गवास से आपकी बुजुर्ग पीढ़ी का समापन हो गया। मैं जब लखनऊ आई थी तो उन्हें देखने उनके घर गई थी। वे होश में नहीं थे और किसी को पहिचान नहीं सकते थे। मुझे लग रहा था कि उनका जीवन शीघ्र ही समाप्त होने वाला है। वे बहुत विद्वान और धर्मनिष्ठ यशस्वी पुरुष थे। जीवन की घोर कारुणिक घटनाओं को झेलते हुए भी वे अपने कर्मपथ पर अविचलित रहे।

पं. सुनील संचय शास्त्री, नरवां (सागर) : शोधादर्श को उन्होंने जिस तरह से उम्र के इस पड़ाव में सम्हाले रखा था वह अपने आप में उनकी कर्मठता व लगनशीलता तथा समाज के प्रति समर्पित भावना को बताता था। प्रत्येक अंक का सम्पादकीय समाज को एक नयी दिशा देता था। समाचार विमर्श तो मानों चारों तरफ चर्चा का केन्द्र बिन्दु बना रहता था। उनसे पत्र-व्यवहार भी हुआ है। उनके चार-पांच पत्र आज भी मेरे पास किसी खास इमारत की तरह सुरक्षित हैं। इतनी वृद्धावस्था में भी पत्रों का तत्परता से उत्तर देते रहे। अजित प्रसाद जी ने जो अमूल्य योगदान समाज, धर्म, संस्कृति के लिए दिया है वह स्तुत्य है।

श्री सुबोध कुमार जैन, आरा : श्री अजित प्रसाद जी ने **शोधादर्श** के सम्पादक के रूप में जैन समाज की जितनी सेवा की है भुलाया नहीं जा सकता है।

श्री सुभाष जैन, नई दिल्ली : श्री अजित प्रसाद जी जैन ने सम्पादन के क्षेत्र में जो मापदण्ड स्थापित किए हैं उनको छूना आज के संपादकों के लिए असंभव है। उनकी लेखनी में जादू था।

डॉ. ज्योति प्रसाद जी की तरह उन्होंने भी अनवरत समाज की सेवा की। ऐसी विभूति को खोकर समाज ने एक अनमोल रत्न गवां दिया है।

श्री सुरेश 'सरल', जबलपुर : जैन गज़ट में श्रद्धेय अजित प्रसाद जैन के निधन का समाचार पढ़कर मन क्षण भर को पाषाण सा बनकर रह गया मानो किसी ने हमारी निधि छीन ली। वे उन महान हृदयवान व्यक्तित्वों में से थे, जो तिनके की आवाज भी समय पर सुनने की साध रखते थे।

चयनिका

जिस प्रकार आद्य सम्पादक स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का एक लेख *शोधादर्श* के प्रत्येक अंक में पाठकों की जिज्ञासापूर्ति के लिये प्रकाशित किया जाता है, उसी प्रकार स्व. प्रधान सम्पादक श्री अजित प्रसाद जैन का भी कोई लेख आदि *शोधादर्श* के आगामी अंकों में दिया जाता रहेगा। स्व. श्री अजित प्रसाद जैन की लेखनी से प्रसूत चार विशिष्ट लेख, जिनका सामायिक उपयोग है और जो उनके विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं, यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं। - रमा कान्त जैन

श्राद्ध पर्व - दीपावली

ज्ञानपुंज तीर्थंकर भगवान महावीर के निर्वाण पर स्वयं उनके प्रमुख शिष्य चार ज्ञान के धारी गौतम गणधर विषादग्रस्त हो गये थे। किन्तु शीघ्र ही उन्होंने अपने विषाद पर विजय प्राप्त की तथा मोक्ष कल्याणक के दृष्टा उपस्थित चतुर्विध संघ को सान्त्वना देते हुए उन्होंने संबोधा कि भगवान तो शुद्ध, बुद्ध, निरंजन, सिद्धात्मा हो गये, कृत कृत्य हो गये। आओ, उनके द्वारा प्रज्ज्वलित ज्ञान ज्योति को हम एक दीप से दूसरा दीप जलाकर अक्षुण्ण रखें, ज्ञान की अजस्र धारा को निरन्तर प्रवाहमान रखें।

श्वेताम्बर परम्परा के ग्रन्थ **कल्प सूत्र**, जो अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी (ईसा पूर्व चौथी शती) कृत माना जाता है, में लिखा है कि भगवान के निर्वाण के प्रत्यक्षदर्शी नौ मल्ल, नौ लिच्छवी, काशी-कोसल के राजा तथा पावा के असंख्य नागरिकों ने दीपमालिका संजोकर निर्वाणोत्सव मनाया। यह घटना ईस्वी पूर्व ५२७ में घटित हुई थी तथा तबसे श्रद्धालुजन इसे प्रति वर्ष अत्यन्त श्रद्धा एवं भक्ति के साथ मनाते आ रहे हैं। देश भर में इस पर्व का मनाया जाना दीर्घकाल तक सम्पूर्ण देश में जैन धर्म के व्यापक प्रसार एवं प्रभाव का द्योतक है। भगवान महावीर को मोक्षलक्ष्मी की प्राप्ति तथा गणधरों में प्रमुख (गणेश) गौतम स्वामी को इसी दिन केवलज्ञान की प्राप्ति की स्मृति को बनाए रखने के लिए लक्ष्मी एवं गणेश की पूजा की जाती है। तभी से वीर निर्वाण संवत् प्ररम्भ हुआ जो इस समय संसार में प्रचलित प्राचीनतम सम्वत् है। भगवज्जिनसेनाचार्य कृत **हरिवंश पुराण** (रचना ७८३ ई.) तथा आचार्य गुणभद्र कृत **उत्तर पुराण** (रचना ईसा की नौवी शती) में भी भगवान महावीर के निर्वाणोत्सव का विशद वर्णन किया गया है। अनेक मुसलमान विद्वानों ने (अब्दुल रहमान मुलतानी ने अपभ्रंश के ग्रंथ **संदेश वाहा**-रचना १३०० ई. में, अबुल फज़ल ने **आइने अकबरी**-रचना १५९४ ई. में) तथा महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, श्री परिपूर्णानन्द वर्मा आदि अनेक मनीषी विद्वानों, साहित्यकारों,

इतिहासकारों ने दीपावली पर्व का प्रारम्भ भगवान महावीर के निर्वाण से जुड़ा स्वीकार किया है। कालान्तर में स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी रामतीर्थ तथा गुरु गोविन्द सिंह की महत्त्वपूर्ण जीवन घटनाओं से जुड़ जाने से इस पर्व का महत्व बढ़ता गया।

एक जनश्रुति के अनुसार भगवान रामचन्द्र ने लंकाधिपति रावण पर विजय प्राप्त कर दीपावली के दिन अयोध्या में प्रवेश किया था तथा राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए थे जिसकी खुशी में अयोध्या में दीपावली मनाई गई थी, किन्तु इस जनश्रुति की पुष्टि रामकथा के सर्व प्राचीन ग्रंथ ऋषि वाल्मीकि कृत **रामायण** से नहीं होती। उक्त रामायण के अनुसार श्री रामचन्द्र चैत्र शुक्ल चतुर्दशी को रावण पर विजय प्राप्त कर उसकी अन्त्येष्टि करवाकर और विभीषण को लंका के राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित कर पुष्पक विमान द्वारा एक सप्ताह के भीतर ही वैशाख कृष्ण पंचमी को प्रयाग आकर भारद्वाज मुनि के आश्रम में पधारे थे और अगले दिन ही अयोध्या में उनका भव्य स्वागत और राज्याभिषेक हुआ था। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी रावण वध चैत्र शुक्ल चतुर्दशी को ही माना है तथा राम राज्याभिषेक दीपावली से ६ मास से भी अधिक पहले हुआ माना है।

अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव के कारण दीपावली जैन धर्मावलम्बियों के लिए अत्यन्त श्रद्धा का पर्व है। वस्तुतः यह जैनियों का **श्राद्ध पर्व** है जिसमें न केवल भगवान महावीर को बल्कि इस अवसर्पिणी काल में आदि तीर्थंकर भगवान महावीर से लेकर जम्बू स्वामी पर्यन्त जितने भी महापुरुष मोक्ष प्राप्त कर सिद्ध लोक पधारे हैं उनका तथा उनकी निर्वाण भूमियों का अत्यन्त विनय के साथ स्तवन वन्दना करके श्रद्धांजलि अर्पित की जाती है।

दीप से दीप जलाओ, जिनवाणी द्वारा निसृत ज्ञान गंगा को निरन्तर प्रवाहमान रखो यही महान् ज्योति पर्व दीपावली का संदेश है।

मेरा सुझाव है कि जैनी, इसे अपने परिवार के पूर्वजों के श्राद्ध-श्रद्धांजलि दिवस के रूप में भी मनाया करें। **(शोधादर्श-१०)**

पावापुरस्य बहिरुन्नत भूमिदेशे,
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्रीवर्द्धमानजिनदेव इति प्रतीतो,
निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा ।।

-पूज्यपाद देवनन्दि

समाज सुधार में धर्मगुरुओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो

जैन धर्म में धर्म गुरुओं का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है, बड़ा मान-सम्मान है, जितना कदाचित् ही किसी समाज में हो। मोक्ष मार्ग के साधक होने के कारण वे बड़े श्रद्धास्पद हैं। सतत वीतरागता, समता, इन्द्रिय संयम तथा अपनी देह से भी विरक्तता एवं सभी प्राणियों से मैत्री भाव की साधना करने वाले इन पंच महाव्रती गुरुओं में श्रावक तीर्थंकर महाप्रभु का साधनारत प्रतिबिम्ब खोजता है तथा उनकी गिनती अर्हन्त-सिद्धों के साथ परमेष्ठियों में करता है।

आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा से सभी पिच्छीधारी गुरु-गुरुणी चातुर्मास स्थापना करके एक ही स्थान (नगर-कस्बे-गांव) में स्थिरावास करते हैं। जहाँ कहीं किसी आचार्य-मुनि-आर्यिका माता श्री का चातुर्मास होता है वहाँ उनके सान्निध्य एवं प्रेरणा से हो रहे वृहद् पूजा विधान, उनके धर्म प्रवचन, धार्मिक गोष्ठियां, शोभा यात्राएं, चातुर्मास काल में पड़ने वाली उनकी तथा उनके गुरुवर्य की जन्म-दीक्षां-आचार्य पद तथा समाधि जयन्तियों को बड़े समारोहपूर्वक मनाने, अपने गुरुवर्य या स्वयं अपने द्वारा प्रायोजित करोड़ों की लागत से नवीन अतिशय क्षेत्रों के निर्माण-विकास या इसी प्रकार की अन्य भारी योजनाओं के लिए विपुल द्रव्य का दान देने के लिए श्रावकों को प्रेरणा देने, उन्हें तीर्थभक्त, मुनिभक्त, धर्म शिरोमणि, दानवीर आदि के विरुद से उन्हें संबोधित कर धर्म कार्यों के लिए अधिकाधिक दान देने के लिए उत्साहित करने से समाज में अपूर्व श्रद्धा व धर्म प्रभावना का वातावरण चातुर्मास भर बना रहता है। जिन मुनि श्री/आर्यिका माताश्री का चातुर्मास जितना वैभवपूर्ण ढंग से मनाया जाता है, वह उतने ही प्रभावक मुनिराज/माताश्री गिनी जाती हैं। अभी दो वर्ष पूर्व हुए एक प्रवचन कुशल प्रभावक युवा मुनि श्री के चातुर्मास काल में हुए व्यय को चातुर्मास व्यवस्था समिति के आयोजकों ने लगभग २० लाख रुपया बताया था। इस व्यय का कोई लेखा जोखा या हिसाब किसी को नहीं देना पड़ता। अतः उत्साही कार्यकर्ताओं की भी कोई कमी नहीं रहती।

हमारे अधिकांश धर्म गुरुओं/गुरुणियों की धर्म प्रभावना की अवधारणा प्रायः उपर्युल्लिखित कार्यक्रमों तक ही न्यूनाधिक सीमित रहती है।

आज अकेले दिगम्बर जैन आम्नाय में पिच्छीधारी धर्म गुरुओं/गुरुणियों की संख्या ५०० के लगभग होगी तथा उनके अकेले चातुर्मास काल पर ही समाज का अरबों का व्यय हो जाता है।

हमें धर्म प्रभावना के निमित्त से किए गए किसी भी आयोजन पर कोई आपत्ति नहीं है यद्यपि वैभवपूर्ण प्रदर्शनों से समाज का कोई भला नहीं होता। वृहद् क्रिया काण्ड भी जैनधर्म की मूल भावना से मेल नहीं खाते।

यदि हमारे धर्म गुरु/गुरुणी, जिनके प्रति समाज में अत्यन्त श्रद्धा व सम्मान है। कुछ समाज सुधार की ओर भी ध्यान दें तो उनका समाज पर स्थायी उपकार होगा। आज दहेज प्रथा के अभिशाप से जैन समाज का कम सम्पन्न विशाल वर्ग बुरी तरह से ग्रस्त है। होड़ा-होड़ी में वर पक्ष द्वारा दहेज की अधिकाधिक मांग तथा विवाह समारोह में वैभवपूर्ण प्रदर्शन से एक ही कन्या के विवाह से अनेक परिवारों की आर्थिक स्थिति ही चरमरा जाती है। परिणामस्वरूप अनेक कन्यायें बिना ब्याहे ही जीवन यापन करने के लिए विवश हो रही हैं। दहेज हत्याओं से भी यह अहिंसा परमो धर्मः का उद्घोष करने वाली समाज भी अछूती नहीं रह गयी है। यदि हमारी श्रद्धा के केन्द्र मुनि/आर्यिका माताएं जैन समाज को कुरीतियों से उबारना भी अपने साधु जीवन का मिशन बना लें तो निश्चय ही समाज को इन कुरीतियों से उबरने में देर नहीं लगेगी और वह एक आदर्श समाज बन सकेगा।

इसके लिए हमारा उनसे विनम्र निवेदन है कि अपने प्रवचनों में वे-

(१) दहेज की कुप्रथा का डटकर विरोध करें तथा युवकों व उनके अभिभावकों से दहेज न मांगने-लेने के प्रतिज्ञा पत्र भरवाएं।

(२) विवाह समारोह व अन्य पारिवारिक उत्सव सादगी से मनाए जाने पर जोर दें।

(३) बिजली की सजावट, रोशनी व अनावश्यक साज-सज्जा पर अपव्यय रोकने की दृष्टि से तथा जैनधर्म की पहिचान बनाए रखने के लिए सब विवाह कार्य दिन ही में सम्पन्न करने पर बल दें।

(४) अब विवाह समारोहों में अपव्यय रोकने के लिए सामूहिक विवाह की भी प्रथा चल पड़ी है पर कदाचित् ही कोई सम्पन्न परिवार ऐसे समारोहों में सहभागी होता हो। यदि सम्पन्न परिवार इसमें अगुवाई करें तो कम सम्पन्न परिवार भी इस प्रथा को अपनाने में उत्साहित होंगे।

ये हमने केवल कुछ सुझाव दिए हैं जिन्हें अपनाकर हमारे श्रद्धेय मुनिगण एवं आर्यिका माताएं अपने साधु जीवन का सार्थक उपयोग समाज कल्याण के लिए कर सकते हैं। **(शोधादर्श- ५३)**

कुत्ते भौंकते रहे, कारवां चलता गया

'सभी (जैन) विद्वान कुत्ते हैं।'' चौंकिए मत, ये शब्द हमारे नहीं, एक वरिष्ठ दिगम्बर आचार्य जी के हैं। अ. भा. दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद् द्वय में से एक के अध्यक्ष एवं **'जैन संदेश'** के प्रधान सम्पादक डॉ. राजारामजी को वाराणसी से उनको दो विद्वान मित्रों ने उन्हें संयुक्त रूप से लिखे पत्र में सूचित किया है।

एक पूजनीय आचार्यजी द्वारा सभी विद्वत्जनों के इस चौंकाने वाले मूल्यांकन से व्यथित होकर आदरणीय डॉ. साहब ने 'जैन संदेश' दिनांक १.३.२००० के अपने सम्पादकीय लेख में लिखा है कि ये मित्र कुछ माह पूर्व आचार्यश्री की प्रशंसा करते नहीं अघाते थे तथा उनके तत्वावधान में वाचनाओं एवं व्याख्यान मालाओं का आयोजन करते कराते रहे हैं।

इन आचार्यश्री की दीर्घ दीक्षावधि में अनेक विद्वान उनके सम्पर्क में आए होंगे। अतः समाज के विद्वानों के विषय में उनकी उपरोक्त धारणा निश्चय ही उनके स्वानुभव पर आधारित होगी। वैसे भी आचार्यश्री उत्कट तपस्वी हैं, सत्य महाव्रतधारी हैं। अतः उनके मुखारविन्द से जो भी वचन उच्चरित होंगे, वे सत्य के अलावा और कुछ नहीं हो सकते। उनकी इस स्पष्टोक्ति के लिए भले ही वह कटु लगे या कोई उन पर भाषा समिति का दोष लगाए हम उन्हें सधुवाद देते हैं। वस्तुतः आचार्यश्री के इस सटीक मूल्यांकन ने समाज के विद्वत्जनों को अपने अन्तर में झांकने के लिए ही प्रेरित किया है।

विचार करने पर इस चतुष्पाद प्राणी में तथा अपने विद्वत्जनों में कई बिन्दुओं पर असाधारण समानता दृष्टिगोचर होती है। कुत्ता बड़ा ही स्वामीभक्त प्राणी है। हमारे अधिकांश विद्वत्जन भी अपनी मुनि भक्ति में कम नहीं हैं। कुत्ता स्वामी के गुण-दोष कुछ नहीं देखता बशर्ते वह उसे टुकड़ा डालता रहे। हमारे अधिकतर मुनिभक्त विद्वत्जनों की दृष्टि में भी वे सभी दिगम्बर वेशी मुनि पूजनीय हैं, संस्तुत्य हैं जो उन्हें सम्मान, पुरस्कार, उपाधियों का चारा डलवाते रहे, प्रमुदित मुद्रा में पिच्छी छुआकर उन्हें आशीर्वाद देकर व अन्य प्रकार समाज में उनकी प्रतिष्ठा वृद्धि में सहायक होते रहे। फिर चाहे मुनिश्री कैसी ही शिथिलाचारी प्रवृत्तियों में लिप्त हों, वे उनकी स्तुतिगान करते रहेंगे और विद्वत्जन तो समाज की आंख होते हैं, उसके मार्गदर्शक होते हैं। समाज उनके पीछे-पीछे चलता है।

यदि कोई विद्वान (या प्रबुद्ध श्रावक) आंख से उपगूहन की पट्टी हटाकर किन्हीं मुनिजी के चर्या शैथिल्य को लक्ष्य करके पत्र-पत्रिकाओं में तीखी आलोचना करने का दुस्साहस कर भी दे तो या तो समाज का ही एक वर्ग मुनिश्री के पक्ष में खड़ा नजर

आएगा या आलोचक को अपनी हरकतों से बाज आने के लिए किन्हीं अज्ञात व्यक्तियों से धमकी भरी चेतावनी प्राप्त हो जाएगी। वैसे भी मुनिजी पर तो उन आलोचनाओं का कोई असर होता नहीं वे उनसे तनिक भी विचलित न होकर (इसे गली के श्वानों का भौंकना मात्र मानकर) मन्थर गति से अपनी डगर पर पूर्ववत् चलते रहते हैं।

कुछ समय पूर्व समाचार पत्रों की सुर्खियों में बने एक आचार्यश्री पर उन्हीं की एक शिष्या आर्यिकाजी द्वारा शील भंग का अकल्पनीय आरोप लगाए जाने पर जैन जगत में भूकम्प सा आ गया था। समाज प्रमुखों द्वारा गठित उच्च स्तरीय जांच आयोग के निष्कर्षों को मानने से आचार्यजी ने तो इंकार कर ही दिया, एक अखिल भारतीय संस्था के शीर्ष नेता ने भी आयोग के निष्कर्षों को गलत ठहराते हुए आचार्यजी को निर्दोष घोषित कर दिया। साथ ही समाज पर उनके द्वारा किए गए महान उपकारों के लिए समाज की कृतज्ञता भी प्रकाश कर दी। आचार्यश्री श्रद्धालु श्रावकों की भारी जय जयकार के बीच नवीन महामन्दिरों एवं तीर्थक्षेत्रों का निर्माण कराते पूर्ववत विचरण कर रहे हैं और आरोपी आर्यिकाजी दीक्षा छेदकर गुमनामी के अंधकार में खो गई हैं।

मुजफ्फरनगर में चर्या शैथिल्य के कारण भारी पिटाई किए जाने से बहुचर्चित हुए आचार्यश्री को वहां से पुलिस संरक्षण में विदा होना पड़ा था। उनके साथ किए गए दुर्व्यवहार की जैन जगत में सर्वत्र (उनके आलोचकों सहित) भारी निन्दा करते हुए आचार्यजी से अपनी चर्या में गुणात्मक सुधार लाने की अपील की थी। अपील का आचार्यश्री पर क्या असर होना था। सोनागिरजी में पुनः किसी महिला के प्रसंग से उनके साथ दुर्व्यवहार हुआ। वहां से निर्विकल्प भाव से विहार कर कामा (राजस्थान) पहुंचने पर उनका जन्म दिवस विशुद्ध पश्चिमी शैली से मनाया गया। आचार्यश्री ने प्रमुदित मुद्रा में केक काटी तथा भक्तों को खिलाई, भक्तों ने भी हर्ष विभोर हो उन्हें घेरकर 'हैप्पी बर्थ डे टू यू' गाया। ("तीर्थंकर' के विद्वान सम्पादक ने इसे 'पश्चिम से उदय हुआ सूरज' कहा है।) आचार्यश्री अपने आलोचकों को मुनि निन्दक, सोनगढ़ पंथी एकान्तवादी घोषित करते हैं।

गणधराचार्य जी ने अपनी प्रिय शिष्या आर्यिकाजी को (जो उन्हें पापा कहकर सम्बोधित करती हैं) गर्भपात होने पर भी बहुत अनुनय विनय के बावजूद, संघ से पृथक् करना स्वीकार नहीं किया।

दूसरी अ. भा. दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद् के विद्वान अध्यक्षजी व उनकी परिषद से जुड़े सभी विद्वत्जनों के प्रबल विरोध (कदाचित् कागजी ही) से किंचित्मात्र भी विचलित हुए बिना बालाचार्यश्री पूर्व घोषणानुसार ही सागवाड़ा-योगीन्द्रगिरि की

भट्टारकीय पीठ पर दिगम्बर मुनिवेश में ही अभिषिक्त हो गए। वस्तुतः इन महामुनियों की दृष्टि में विद्वानों तथा प्रबुद्ध श्रावकों की आलोचना व विरोध का महत्व कुत्तों के भौंकने से अधिक नहीं है, और-'कुत्ते भौंकते रहे, कारवां चलता गया।'

बालाचार्यजी के इस नवीन उपक्रम के पक्ष में भी कतिपय विद्वान एवं श्रेष्ठीजन खड़े हैं जिनका कहना है कि इसमें नया क्या है? भट्टारक परम्परा के प्रारम्भिक काल में भी तो भट्टारकगण दिगम्बर मुनि वेशधारी ही होते थे। श्रावकों के सम्मुख अवश्य इससे अब एक नई समस्या खड़ी हो गई है कि दिगम्बर जैन मुनि (साधु परमेष्ठी) तथा दिगम्बर मुनिवेशधारी भट्टारक स्वामी में किस प्रकार अन्तर करे। संत शिरोमणि आचार्यश्री विद्यासागरजी के अनुसार तो वर्तमान में भट्टारकों की गणना तो क्षुल्लकों में भी नहीं की जा सकती।

कुछ समय पूर्व शोधकर्ता विद्वान ने विद्वत्जनों में बिच्छु के गुण खोज निकाले थे। किस विद्वान ने कल्पना की होगी कि बिच्छु व कुत्ता उसके पूज्य अग्रज हैं। इस विषय पर कदाचित् अभी भी और शोध खोज की संभावनाएं हैं।

(**समन्वय वाणी**, मई २०००, प्रथम पक्ष)

मेरी अन्तिम अभिलाषा

गत अप्रैल मास में ही दो बार हार्ट अटैक (५/४ तथा २६/४) को पड़ जाने के उपरान्त अब मेरे १६ वर्ष पुराने हृदय रोग की जैसी गंभीर स्थिति होती जा रही है उससे स्वास्थ्य में किसी उल्लेखनीय सुधार की संभावना कम ही रह गई है। दृष्टि मंदता में उतरोत्तर वृद्धि से पढ़ना लिखना भी अल्पातिअल्प होता जा रहा है। लगता है जीवन के इस अन्तिम चरण का भी अन्तिम चरण निकट आ गया है। सो जीवन का अंत तो देर सबेर एक दिन होना ही है।

अब मेरी एक ही अन्तिम अभिलाषा है। मैने अपने धर्म और समाज से बहुत कुछ सीखा और पाया है। उनके उपकार से मैं कभी उऋण नहीं हो सकता। मेरी एक यही अभिलाषा है कि जिनेन्द्र देव की अनुकम्पा से मुझमें इतनी शक्ति बनी रहे कि मैं अन्तिम श्वास तक धर्म व समाज की कुछ न कुछ सेवा करता रह सकूं तथा यदि मेरे किसी सुकृत्य के फलस्वरूप मुझे पुनः नर भव प्राप्त हो तो मेरा जन्म जैनधर्म व जैन समाज में ही हो।

मेरे आदर्श महापुरुष भगवान महावीर स्वामी हैं। वे ही मेरे परम इष्ट हैं। श्वेताम्बर आम्नाय में संरक्षित एक अनुश्रुति के अनुसार कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि के चौथे प्रहर में तीर्थंकर महाप्रभु का अन्तिम धर्मोपदेश चल रहा था जिसे समवसरण में उपस्थित सभी श्रोतागण भाव विभोर हुए सुन रहे थे कि यकायक दिव्यध्वनि का खिरना बन्द हो गया। तब श्रोताओं को पता चला कि भगवान का निर्वाण गमन हो गया। लोक कल्याण की ऐसी असीम भावना थी भगवान वर्द्धमान महावीर स्वामी की। भगवान के इस अन्तिम धर्मोपदेश के आधार पर ही **उत्तराध्ययन सूत्र** संकलित किया गया कहा जाता है। (**शोधादर्श- ५३**)

शोधादर्श में श्री अजित प्रसाद जैन की लेखनी का योगदान

(अ) सम्पादकीय अग्रलेख :		अंक	पृष्ठ
१.	कलिकाल सर्वज्ञ	१५	१९-२३
	यह कैसा जीर्णोद्धार?		२३-२७
	हस्तिनापुर क्षेत्र पर आतंक की काली छाया		२८
२.	षष्ठम पट्टाचार्य	१८	२-०५
३.	कर्मयोगी	१९	३-०८
४.	विद्वानों ने पास किये प्रस्ताव	२१	९-१३
५.	आगम और अवर्णवाद-एक चिन्तन	२२	७-१६
६.	श्री सम्मेदशिखर विवाद विमर्श	२३	७-१२
	यह कैसी पत्रकारिता		१२
७.	श्रमणाचार के नये आयाम	२४	६-१२
८.	पंच-कल्याणक प्रतिष्ठाएं	२५	१३-१९
९.	वाग्देवी के अवतरण का पर्व-श्रुत पंचमी	२६	१३९-४२
१०.	जयति ज्योति पर्व	२७	२२६-३२
११.	प्रथम इतिहास पुरुष	२८	५-१३
१२.	वीर शासन जयन्ति	२९	१३६-४०
१३.	शिथिलोन्मुख दिगम्बर साध्वाचार पर एक तीखा प्रहार	३०	२२६-३२
१४.	मन्दिरों में चोरियां	३१	११-१५
१५.	कलिकाल तीर्थंकर	३२	१०१-०५, १०९
१६.	जैन समाज को अल्पसंख्यक की मान्यता	३३	२१२-२०, २५७-५९
१७.	तीर्थक्षेत्रों पर भट्टारक पीठों की स्थापना की वकालत	३४	१५-२६
१८.	प्रधानमंत्री जी द्वारा समवशरण-रथ का प्रवर्तन	३५	१०८-१३
१९.	तीर्थक्षेत्रों का विकास	३६	२५८-६४, २६२-६८
२०.	पदवियों की मर्यादा का भी ध्यान रखें	३७	१२-१७
२१.	न भूतो न भविष्यति : तीस-चौबीसी मन्दिर का प्रतिष्ठा महोत्सव	३८	१३९-४२, १७५-७८
२२.	बालाचार्य जी की विचित्र आध्यात्मिक यात्रा से उभरे कुछ प्रश्न	३९	२३६-४३
२३.	भट्टारक क्षुल्लक भी नहीं	४०	१३-१९

२४.	समन्वय समिति के महत्वपूर्ण निर्णय	४१	१२४-२६
२५.	बदरीनाथ धाम में जैन मंन्दिर में भ. ऋषभदेव-मूर्ति स्थापना का विरोध	४२	२४२-२४५
२६.	२६००वां वीर जयन्ति महोत्सव वर्ष	४३	१२-१७
२७.	जयति श्रुत देवता	४४	१२-१५
२८.	यह कैसा अहिंसा वर्ष ?	४५	१२-१५
२९.	अहिंसा शिखर सम्मेलन-दीक्षा कल्याणक	४६	१२-१३
३०.	पुरा सम्पदा का संरक्षण	४७	९-१०
३१.	मंगलं पुष्पदंताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्	४८	११-१७
३२.	कलिकाल तीर्थंकर अंकलीकरजी-अवर्णवाद की पराकाष्ठा?	४९	१३-१५
३३.	तीर्थंकर पार्श्वनाथ	५०	८-१७
३४.	वीर निर्वाण स्थली पावा	५१	११-१७
३५.	धार्मिक पत्रकारिता	५२	११-१९
३६.	भगवान महावीर का संघ परिवार	५३	९-१०
३७.	दिगम्बर जैन समाज व श्रमण संघों पर सशक्त नेतृत्व का एक ही तरीका	५४	११-२०
३८.	समाधिमरण	५५	८-१०
३९.	चमत्कार की जयजयकार	५६	१०-११

(आ) अन्य लेख-आदि :

१.	णमोकार महामंत्र की ऐतिहासिकता पर एक दृष्टि	८	१७-२१
२.	चम्पा के राजा श्रीपाल		२२
३.	यह कैसी पत्रकारिता	९	४-०८
४.	महाराष्ट्र के जैन कासार		८-११
५.	भगवत्कुन्दकुन्दाचार्य और उनका समय	१०	८-१८
६.	श्राद्धपर्व दीपावली		६०-६१
७.	अग्रवाल जाति और जैन धर्म	११	२०-२७
८.	णमो लोए सव्व साहूणं	१२	४४-४६
९.	वीर शासन जयन्ति		४६-४७
१०.	आधुनिक युग के आद्य शिक्षाविद् राजा शिव प्रसाद (जैन) सितारे हिन्द	१३	३५-३७
११.	राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द	१४	२३-३०
१२.	अंग्रेजी जैन गजट		४०
१३.	८६ वर्ष पूर्व अंग्रेजी जैन गजट	१५	४५-४६
१४.	पहला विवाह क्या विधवा विवाह ही नहीं था?	१६-१७	४६-४७
१५.	क्या Kalanos (कल्याणमुनि?) दिगम्बर जैन मुनि थे?		४८-५३, ५५

१६. जैन पत्रकारिता पर कुछ प्रश्न चिह्न	१६-१७	१०५-०८
१७. देवगढ़ जीर्णोद्धार		११९-२०
१८. एक ऐतिहासिक दस्तावेज	१८	६-१६
१९. समयसार शुद्धि प्रकरण	२०	२५-२९
२०. श्री बाहुबलि महामस्तकाभिषेक विमर्श	२१	१६-१९, २३
२१. श्री अयोध्या जी तीर्थक्षेत्र का विकास		२९-३०
२२. और अब सिंहरथ भी		३०-३१
२३. सन् १९२० के दशक की एक लघु तीर्थयात्रा : एक संस्मरण	२२	५६-५९
२४. उमास्वामी श्रावकाचार-एक अध्ययन	२४	५३-५७
२५. कासी-कोसल के नौ-मल्ल नौ-लिच्छवि राजा	२७	२५६-५७
२६. भगवान महावीर का अन्तिम धर्मोपदेश और उनका धर्म परिवार		२५८-५९
२७. तीर्थंकर गर्भावतरण पर रत्नवृष्टि	२८	६४-६५
२८. छप्पन कुमारी देवांगनाएं		६५
२९. सुमेरू पर्वत पर जन्माभिषेक		६५-६७
३०. कुछ रोचक प्रश्न एवं समाधान		६७-६९
३१. मध्य लोक	३०	२६४-६९
३२. निर्वाणकाण्ड और उसके रचनाकार		२६९-७०
३३. सोनागिरि		२७०-७१
३४. तीर्थंकरों की आयु, नाम		२७२-७५
३५. केशलोंच		२७५-७६
३६. भक्तामर स्तोत्र की एक सचित्र प्रति	३१	४३-४५
३७. चक्रवर्ती भरत	३२	१२७-३१
३८. स्वर्ग-नरक चिन्तन	३४	६२-६३
३९. संस्मरण-श्रद्धांजलि (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति)	३५	१२४-२६
४०. पिच्छि की मर्यादा		१६०-६१
४१. भगवान ऋषभदेव की निर्वाण भूमि	३६	२६२-६८
४२. निगंठ नातपुत्त	३७	७१-७४
४३. चर्चा : भगवान ऋषभदेव की निर्वाण भूमि		७५-८१
४४. विद्वत् परिषद के चुनाव और विभाजन	३९	२७२-७६
४५. भट्टारक-तब और अब		२७७-७९
४६. समाज-चिन्तन : परिषद का हीरक जयन्ति अधिवेशन	४०	४४-४७
४७. अपनी परम्पराओं को न भूलें	४४	५४-५६
४८. समवशरण		५६-५७
४९. जन्म नगरी कुण्डलपुर		५८-५९

५०.	निर्वाण महोत्सव एवं श्रद्धांजलि पर्व-दीपावली	४५	४०-४२
५१.	सही निर्वाण-स्थली पावा कहाँ ?		६०-६१
५२.	The Archaeology of Faith-Lord Rishabhdeo	४६	४१-४२
५३.	भगवती सूत्र का मांसाहार प्रकरण-एक मीमांसा	४७	२३-३१
५४.	श्रावकाचार संगोष्ठी		४१-४५
५५.	वीर-जन्मस्थली कुण्डलपुर प्रकरण-एक विश्लेषण	४८	३५-४२
५६.	हस्तिनापुर क्षेत्र की यात्रा	५०	४१-४२
५७.	परमेष्ठी नमस्कार मंत्र	५२	३८-४१
५८.	समाज सुधार में धर्मगुरुओं की महत्वपूर्ण भूमिका	५३	४०-४१
५९.	मेरी अन्तिम अभिलाषा		७४
६०.	कुण्डगामंपुरं	५४	३९

(इ) तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र. :

१.	परिचय एवं प्रकाशन	१	कवर ३-४
२.	अधिवेशन दि. ६.२.१९८७	३	३५-३६
३.	महावीर निर्वाण जयन्ति दि. १०.११.१९८८	८	४०-४२
४.	समिति की मुख्य प्रवृत्तियाँ	१४	७१-७२
५.	प्रगति प्रतिवेदन १९८७-९१	१५	८१-८७
६.	प्रगति प्रतिवेदन १९९१-९२	१८	८३-८५
७.	साधारण सभा दि. ६.१२.१९९२ की कार्यवाही	१९	८९-९०
८.	वीर शासन जयन्ती दि. ५.७.१९९३	२०	८२-८४
९.	कार्यकलाप १९९३-९४	२२	९६
१०.	सदस्यता शुल्क सम्बन्धी आवश्यक सूचना	२३	९९
११.	शोध पुस्तकालय	२४	९६
१२.	प्रगति प्रतिवेदन १९९२-९५	२५	८१-८४, ८६-८७
१३.	प्रगति प्रतिवेदन १९९५-९६	२८	९३-९७
१४.	प्रगति प्रतिवेदन १९९६-९७	३२	१४५-५०
१५.	प्रगति प्रतिवेदन १९९७-९८	३५	१८१-८४
१६.	प्रगति प्रतिवेदन १९९८-९९	३६	२८५-८६
१७.	प्रगति प्रतिवेर्दन १९९९-२०००	४२	३०१-०४
१८.	प्रगति प्रतिवेशन २०००-२००१	४५	६३-६५
१९	प्रगति प्रतिवेदन वर्ष २००१-२००२	४८	५१-५४
२०.	प्रगति प्रतिवेदन वर्ष २००२-२००३	५०	६०-६४
२१.	प्रगति प्रतिवेदन २००३-२००४	५४	४४-४८
२२.	प्रगति प्रतिवेदन वर्ष २००४-२००५	५६	४६-५०

(इ) समाचार विमर्श :

१.	ज्ञान मन्दिर का उद्घाटन	२०	६
२.	तीन-चौबीसी मन्दिर का शिलान्यास		१०
३.	श्री दिगम्बर जैन त्रिमूर्ति मन्दिर पंचकल्याणक		१०-११
४.	आचार्य सुशील कुमार द्वारा मुखपत्ति के त्याग की घोषणा		११-१२
५.	युग प्रधान दानवीर		१२-१३
६.	प्रतिमा लेख मिटाने का कुकृत्य		१३
७.	अलकबीर		१४-१५
८.	कर्नाटक के मुख्यमंत्री/सरकार व आचार्य विद्यानन्द		१६
६.	फरिश्तों के उतरने का स्थान		१६-२२
१०.	धूम महा-महोत्सवों की	२२	८४-८६
११.	नेपाल में दो तीर्थंकरों के जन्मकल्याणक तीर्थ की स्थापना		८६-६०
१२.	सल्लेखना भंग कराई गई		६०-६१
१३.	तीस-चौबीसी मन्दिर का शिलान्यास		६१-६२
१४.	जब मुनियों ने सामूहिक अनशन किया		६२-६३
१५.	आचार्य पद त्याग		६३
१६.	दान महोत्सव	२३	५३-५४
१७.	ब्रह्मोत्सव सम्पन्न		५४-५५
१८.	सिंहरथ प्रवर्तन-एक नाटक		५५
१६.	जैन विश्वविद्यालय का शिलान्यास		५६
२०.	राजर्षि		५६-५७
२१.	भगवान महावीर का जीवन्त अभिनय-आचार्य श्री ने भी अभिनय किया		५७-५८
२२.	'जैन प्रकाश' का आवरण चित्र		५८-५६
२३.	आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज की स्वर्ण पादुका		५६-६०
२४.	क्या मिलता है जैन धर्म का उपहास कराने में		६०-६२
२५.	श्री सम्मेदशिखर विवाद : दो आचार्यों के मध्य सौहार्द वार्ता	२४	६७-६८
२६.	करोड़पति दम्पति की वैराग्य साधना		६८
२७.	मुनि कुमुदनंदि महाराज का आचार्य पद अलंकरण		६८-६६
२८.	जैन विश्वविद्यालय की प्रगति		६६
२६.	और अब आचार्य कल्याणसागर महाराज की चरण पादुका		६६
३०.	सदाचार भारती का भ्रष्टाचार प्रकोष्ठ	२५	६५
३१.	उपवास तपस्या का कीर्तिमान स्थापित		६५
३२.	एक और राष्ट्रसंत हुए		६६
३३.	साहित्य सम्राट बने		६६

३४.	जैन एकता		६७
३५.	भगवान महावीर फाउन्डेशन		६७
३६.	आचार्य श्री का मोक्ष गमन		६७-७०
३७.	गिरनार जी में लाडू मेले		७०-७२
३८.	अभिनव श्रमणाचार		७२-७५
३९.	शास्त्री परिषद का अधिवेशन	२६	१९०-९२
४०.	स्थानकवासी समाज के अनुकरणीय निर्णय		१९२-९३
४१.	महंगे चातुर्मास		१९४-९५
४२.	श्री मानतुंगाचाार्य की चरणपादुका		१९५
४३.	नवोदित भाग्योदय तीर्थ, अमरकंटक	२७	२७३-७४
४४.	पंचम, षष्ठम और अब तृतीय पट्टाचार्य भी		२७४
४५.	परमागम मन्दिर निर्माण योजना		२७५-७६
४६.	श्री चैत्यालय जी की स्थापना		२७६
४७.	विद्वत् परिषद के प्रस्ताव		२७६-७८
४८.	चमत्कार को नमस्कार	२८	१०७-०९
४९.	क्या मिल रहा है कटुता बढ़ाने में		११०-१४
५०.	त्रय गजरथ सहित पंचकल्याणक तथा गुरुमन्दिर स्थापना		११४-१५
५१.	त्रिमूर्ति स्थापना		११५-१६
५२.	दीक्षायें		११६
५३.	सम्मेदशिखर पर निर्माण कार्य	२९	१९२
५४.	मांगीतुंगी पर पंचकल्याणक व आचार्य श्री की अवमानना		१९२-९४
५५.	नवोदित तीर्थक्षेत्र		१९४-९७
५६.	श्रमणाचार के बदलते आयाम-यत्र-तत्र-सर्वत्र		१९७-२०२
५७.	आचार्य द्वय के जन्म जयन्ति समारोह	३०	३०५-०७
५८.	तीर्थक्षेत्रों के नाम से भारी धोखा-धड़ी		३०७-१०
५९.	शौरसेनी प्राकृत गोष्ठी		३१०-१४
६०.	अतिशय क्षेत्र केशवराय पाटन में भूगर्भ विस्तारीकरण		३१४-१५
६१.	श्री सम्मेद शिखर जी		३१५-१७
६२.	कुन्दकुन्द अंग्रेजी भाषा के समर्थक थे-मुनिश्री की अभूतपूर्व खोज		३१७-१८
६३.	आचार्य श्री का निर्वाण महोत्सव	३१	७२-७४
६४.	अनशन तप का नया कीर्तिमान		७५
६५.	मुस्लिम बालिका द्वारा अठाई तप		७५-७६
६६.	गोशाला शिलान्यास	३१	७६
६७.	वीर सेना का गठन		७६-७७

६८.	ॐ ह्रीं ज्ञानमत्यै नमः	३२	१६६-७५
६६.	आचार्य सन्मतिसागर प्रकरण- जस का तस		१७५
७०.	भट्टारकजी द्वारा वाहन प्रयोग का त्याग		१७५-७८
७१.	एक नई भट्टारक पीठ की स्थापना		१७८-१७६
७२.	पावापुरी में प्राचीन चरण चले गये ?		१७६-८३
७३.	महासभा प्रबन्धकारिणी की बैठक		१८३-८६
७४.	आशा की एक किरण (आ. श्री धर्मभूषण)	३३	२७६-८१
७५.	भट्टारक जी के वाहन-त्याग की पृष्ठभूमि	३४	८३-८४
७६.	बलात्कार के अरोपी दिवंगत मुनि निर्दोष सिद्ध		८४-८६
७७.	दिगम्बर जैन समाज के शीर्ष नेताओं की बैठक	३५	२०८-१०
७८.	शास्त्री परिषद का वार्षिक अधिवेशन		२१०-१६
७६.	तीर्थ संरक्षिणी महासभा का गठन		२१६-१६
८०.	गोलाकोट मूर्ति तस्करी काण्ड		२१६-२३
८१.	और दो तीर्थों का उदय	३६	३१०-१३
८२.	जम्बूद्वीप, तीस-चौबीसी, और अब त्रिलोक मन्दिर निर्माण की महायोजना		३१३-१४
८३.	गोलाकोट क्षेत्र-कटे सिरों की बरामदगी		३१४-१५
८४.	नवोदित तीर्थ-योगीन्द्र गिरि	३७	६६-६७
८५.	बिच्छु और विद्वान		६७-६६
८६.	सेलोफोन से बात करते मुनि श्री		६६-१००
८७.	विद्वत् परिषद के चुनाव और विभाजन		१०१-०४
८८.	शास्त्रि परिषद-हीरक जयन्ति व वार्षिक अधिवेशन	३८	१६४-६७
८६.	कामदेव मन्दिर		१६७-२००
६०.	विमल समाधि मन्दिर-साधु मन्दिर		२००-०२
६१.	बालाचार्य का वर्षायोग	३६	३०२-०३
६२.	पंचकल्याणक प्रतिष्ठायें-सादगी से		३०३
६३.	आर्यिका-द्वय की मनोव्यथा	४०	७६-७८
६४.	हैप्पी बर्थ-डे टू यू		७८-८०
६५.	२१वीं सदी का प्रारम्भ कब से		८०-८१
६६.	दवाइयों पर शाकाहारी या मांसाहारी लिखा जाना जरूरी बना		८१-८२
६७.	वैष्णवीकरण के बढ़ते चरण		८२-८३
६८.	दानपर्व अक्षयतृतीया का जीवन्त अभिनय	४१	१६६-२०२
६६.	जिनवाणी वेदी प्रतिष्ठा		२०२-०३
१००.	जैन महातीर्थ पालीताना में मांस बिक्री	४१	२०३-०४
१०१.	मोरों की हत्या		२०४-०५

१०२. शिखर जी में पानी-बिजली व्यवस्था फिर चरमराई	४२	३२१
१०३. श्री सम्मेदशिखर जी में हास्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर		३२२
१०४. 'वीर' और अब 'अति वीर' भी		३२२
१०५. पाठ्य पुस्तक से आपत्तिजनक अंश हटाये जाने की घोषणा		३२३
१०६. जैन संत 'पामिस्ट ऑफ द मिलेनियम' अवार्ड से सम्मानित		३२३
१०७. २१वीं सदी का पुरुषमेघ सोत्रामणी महायज्ञ		३२४
१०८. चन्द्रमा पर इंसान के पैर अभी पड़े ही नहीं-अमरीका दावा झूठा		३२५
१०९. भाषा समिति का विचित्र पालन		३२६
११०. जैन मन्दिर बनाम मैरिज हाउस		३२६
१११. नन्दीश्वर भगवान का महामस्तकाभिषेक		३२७
११२. धर्म संसद में गणिनी आर्यिका ज्ञानमती जी	४३	४६-४७
११३. एक और नई भट्टारक पीठ का सृजन		४८
११४. प्रयलंकारी भूकम्प		४९-५१
११५. दस माह के पुत्र को दीक्षा हेतु अर्पण		५२-५३
११६. ऐसा तो होना ही था	४४	६२-६३
११७. शास्त्रि परिषद का अधिवेशन		६४-६५
११८. सरकारी समारोह-कितनी प्रभावना, कितनी अवमानना		६६-६७
११९. शिखर जी पहाड़ पर डकैतों द्वारा लूटपाट	४५	७४-७५
१२०. महासभा ने महत्वपूर्ण निर्णय लिये		७५-७६
१२१. तीर्थंकर वाटिका		७७
१२२. आचार्य प्रतिमाओं की स्थापना		७७-७८
१२३. १०० करोड़ का आबंटन	४६	५८-५९
१२४. विद्वत् परिषद द्वय के चुनाव		५९-६१
१२५. और अब तीसरी विद्वत् परिषद भी		६१
१२६. भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुरः शास्त्रि परिषद का प्रस्ताव		६१-६२
१२७. मुनि श्री को राजकीय अतिथि का दर्जा		६२
१२८. वर्तमान बुद्धिजीवीफोरम	४७	५९
१२९. गुजरात का नरसंहार		५९-६०
१३०. अहिंसा वर्ष समापन के उपहार (?) : ललित जैन की हत्या घाटकोपर (मुंबई)- राख और एक सारिका की		६०-६१
१३१. इस युग में भी-ताड़पत्रों पर शास्त्र आलेखन		६१-६३
१३२. एक और गणधर हुए		६३-६४
१३३. भाषा समिति	४७	६४

१३४.	मुनि श्री की भट्टारक पद-स्थापना		६५-६७
१३५.	शाकाहार प्रचार-कितना सार्थक		६८-७०
१३६.	महासभा अधिवेशन	४८	५५-५६
१३७.	लब्धि समारोह		५६-५८
१३८.	विद्वत्परिषद का २३वां अधिवेशन	४९	५६-५८
१३९.	आचार्यश्री द्वारा विवाह निषेध का उपदेश		५८-५९
१४०.	स्थानकवासी श्रमण संघ में फाड़	५०	६५-६७
१४१.	पार्श्व ज्योति का घूमता आइना		६७-६८
१४२.	ब्राह्मण आर्यों ने नष्ट की थी सिंधु सभ्यता		६८-६९
१४३.	अयोध्या की विवादित भूमि जैनियों को दिलवाने की मांग	५१	५८-६०
१४४.	अब पंचपरमेष्ठी नहीं षष्ठ परमेष्ठी		६०-६१
१४५.	नवग्रह शांति जिनमंदिर निर्माण		६१
१४६.	तीर्थंकर ऋषभदेव जन्मभूमि अयोध्या तीर्थ		६२-६३
१४७.	गुरु भवन	५२	६५
१४८.	निर्वाण लाडू		६५-६७
१४९.	महासभा का प्रस्ताव : उपगूहन फिर बना श्रमण शिथिलाचार का रक्षक		६७-६८
१५०.	युग प्रधान अब महात्मा	५३	६६
१५१.	मंगलं भगवदो वीरो		६६-६८
१५२.	त्रिकाल चौबीसी मन्दिर		६८-७०
१५३.	पार्श्व ज्योति का घूमता आइना		७०
१५४.	महाराष्ट्र शासन ने मुनि श्री तरुणसागर को राजकीय अतिथि का दर्जा दिया	५४	५२-५४
१५५.	एक ९ वर्ष की बालिका की साध्वी दीक्षा		५४-५५
१५६.	भ. पार्श्वनाथ त्रिसहस्राब्दि महोत्सव		५६
१५७.	निर्वाण लाडू		५६-५७
१५८.	राजनेताओं के लिए भी शैक्षिक योग्यता और प्रशिक्षण		५७-५८
१५९.	भट्टारक सम्मेलन		५८-६०
१६०.	ये महंगी चातुर्मास आमंत्रण पत्रिकाएं		६०-६२
१६१.	हमारे राजनेताओं का मांसाहार शौक : शाकाहार पर दुगना टैक्स		६३
१६२.	जवाहरात व्यवसायी बढ़ेर जी का मोक्षगमन		६३
१६३.	रईसों का एक जैन साप्ताहिक पत्र	५५	५५

साथ ही 'साहित्य-सत्कार' के अन्तर्गत २९४ पुस्तकों आदि का परिचय/समीक्षा देने का श्रेय उन्हें रहा।

समन्वय वाणी में प्रकाशित श्री अजित प्रसाद जैन के सम्पादकीयों की सूची

१.	कर्मयोगी	-	मई (प्रथम पक्ष), १९९३
२.	महामंदिरों का निर्माण	-	जून (द्वितीय पक्ष), १९९३
३.	श्री सेठी उवाच	-	सितम्बर (प्रथम पक्ष), १९९३
४.	अवर्णवाद	-	अप्रैल (प्रथम पक्ष), १९९४
५.	प्रत्युत्तर	-	अप्रैल (द्वितीय पक्ष), १९९४
६.	अनर्गल प्रलाप	-	जुलाई (संयुक्तांक), १९९४
७.	श्री सम्मेदशिखर-विवाद विमर्श	-	सितम्बर (द्वितीय पक्ष), १९९४
८.	आ. शांतिसागर जी की स्वर्ण पादुका	-	अक्टूबर (प्रथम पक्ष) १९९४
९.	क्या मिलता है धर्म का उपहास करने में	-	नवम्बर (द्वितीय पक्ष), १९९४
१०.	कारवां तो वैसा ही चलता रहेगा	-	दिसम्बर (प्रथम पक्ष), १९९४
११.	प्रस्ताव क्या बस पास करने के लिए ही होते हैं	-	दिसम्बर (द्वितीय पक्ष), १९९४
१२.	वाग्देवी का अवतरण	-	अगस्त (द्वितीय पक्ष), १९९५
१३.	आ. सन्मतिसागर प्रकरण	-	सितम्बर (द्वितीय पक्ष), १९९५
१४.	अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का दुरुपयोग	-	अक्टूबर (प्रथम पक्ष), १९९५
१५.	जयति ज्योति पर्व	-	अक्टूबर (द्वितीय पक्ष), १९९५
१६.	सतर्कता प्रकोष्ठ का गठन आवश्यक	-	दिसम्बर (द्वितीय पक्ष), १९९५
१७.	प्रथम इतिहास पुरुष	-	जनवरी (द्वितीय पक्ष), १९९६
१८.	त्रय गजरथ सहित पंचकल्याणक तथा गुरुमंदिर स्थापना	-	अप्रैल (प्रथम पक्ष), १९९६
१९.	महिला सम्मेलन	-	मई (प्रथम पक्ष), १९९६
२०.	श्रुतावतार या वाग्देवी का अवतरण	-	मई (द्वितीय पक्ष), १९९६
२१.	नवोदित तीर्थ उज्जैन	-	जून (प्रथम पक्ष), १९९६
२२.	एक और नवोदित तीर्थ ॐ गिरि	-	जून (द्वितीय पक्ष), १९९६
२३.	वीर शासन जयन्ती	-	जुलाई (संयुक्तांक), १९९६
२४.	रक्षा बन्धन	-	अगस्त (द्वितीय पक्ष), १९९६
२५.	अग्रसेन जयन्ती	-	अक्टूबर (प्रथम पक्ष), १९९६
२६.	क्या कुन्दकुन्द आंग्लभाषा के समर्थक थे	-	जनवरी (प्रथम पक्ष), १९९७
२७.	तीर्थक्षेत्रों पर विवाहों का आयोजन	-	जनवरी (द्वितीय पक्ष), १९९७
२८.	आचार्य श्री का निर्वाण महोत्सव	-	मार्च (प्रथम पक्ष), १९९७
२९.	एक उदात्त संकल्प	-	जून (द्वितीय पक्ष), १९९७
३०.	एक नई भट्टारक पीठ की स्थापना	-	अगस्त (द्वितीय पक्ष), १९९७
३१.	ॐ ह्रीं ज्ञानमत्यै नमः	-	सितम्बर (प्रथम पक्ष), १९९७
३२.	आ. सन्मतिसागर प्रकरण जस का तस	-	सितम्बर (द्वितीय पक्ष), १९९७
३३.	सहस्त्राब्दी समारोह-श्री महावीरजी	-	दिसम्बर (प्रथम पक्ष), १९९७
३४.	ते गुरू मेरे उर बसो	-	फरवरी (द्वितीय पक्ष), १९९८
३५.	श्रुतावतरण : जयति श्रुत देवता	-	मई (द्वितीय पक्ष), १९९८
३६.	तीस चौबीसी पंचकल्याणक की प्रतिष्ठा	-	फरवरी (प्रथम पक्ष), १९९९
३७.	त्रिलोक मंदिर	-	मार्च (द्वितीय पक्ष), १९९९

३८. श्रावक चक्रवती	-	मई (प्रथम पक्ष), १९९९
३९. पदवियों की मर्यादा का भी ध्यान रखें	-	अगस्त (प्रथम पक्ष), १९९९
४०. अहिंसा महाकुम्भ	-	नवम्बर (प्रथम पक्ष), १९९९
४१. युवा शक्ति को प्रणाम	-	दिसम्बर (प्रथम पक्ष), १९९९
४२. बालाचार्य जी की विचित्र आध्यात्मिक यात्रा से उभरते कुछ प्रश्न	-	जनवरी (संयुक्तांक), २०००
४३. परिषद् का हीरक जयन्ती अधिवेशन	-	फरवरी (संयुक्तांक), २०००
४४. विलुप्त अहिच्छत्र क्षेत्र का पुनर्स्थापन	-	अप्रैल (प्रथम पक्ष), २०००
४५. कुत्ते भौंकते रहे, कारवां चलता गया	-	मई (प्रथम पक्ष), २०००
४६. जिनवाणी की वेदी प्रतिष्ठा	-	जुलाई (द्वितीय पक्ष), २०००
४७. भगवान ऋषभदेव	-	जनवरी (प्रथम पक्ष), २००१
४८. चन्द्रगिरि चिक्कवेट्टा महोत्सव	-	जनवरी (द्वितीय पक्ष), २००१
४९. भगवान ऋषभदेव कल्याणक स्थितियां अनिर्णीत	-	फरवरी (संयुक्तांक), २००१
५०. उदार दृष्टि अपनाकर विवाद सुलझायें	-	मई (द्वितीय पक्ष), २००१
५१. ज्ञानपर्व श्रुत पंचमी	-	जून (प्रथम पक्ष), २००१
५२. अहिंसा वर्ष क्या कागज पर ही	-	अक्टूबर (द्वितीय पक्ष), २००१
५३. श्री वीर निर्वाण का दीपमालिका पर्व	-	नवम्बर (प्रथम पक्ष), २००१
५४. सिद्धार्थनगरी कुण्डलपुर कहाँ है	-	मई (संयुक्तांक), २००२
५५. मार्ग प्रभावना	-	जून (प्रथम पक्ष), २००२
५६. हिन्दुत्व और जैन समाज	-	जून (द्वितीय पक्ष), २००२
५७. भ. महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर आगम के आलोक में	-	जुलाई (प्रथम पक्ष), २००२
५८. अभिनव गणधर	-	सितम्बर (प्रथम पक्ष), २००२
५९. मुनि श्री की भट्टारक पद स्थापना	-	सितम्बर (द्वितीय पक्ष), २००२
६०. उदय नई परम्परा का	-	अक्टूबर (प्रथम पक्ष), २००२
६१. शाकाहार प्रचार कितना सार्थक	-	अक्टूबर (द्वितीय पक्ष), २००२
६२. विद्वत्परिषद का २३वां अधिवेशन	-	फरवरी (द्वितीय पक्ष), २००३
६३. आचार्य प्रतिमाओं की प्रतिष्ठापना	-	मार्च (द्वितीय पक्ष), २००३
६४. निर्ग्रन्थनाथ : पार्श्वनाथ	-	अगस्त (द्वितीय पक्ष), २००३
६५. सोली सोरावजी की टिप्पणी दुर्भावनापूर्ण	-	अक्टूबर (प्रथम पक्ष), २००३
६६. दीपावली पर्व, वीर निर्वाण पर्व	-	नवम्बर (प्रथम पक्ष), २००३
६७. महासभा के प्रस्ताव : उपगूहन फिर बना शिथिलाचार की ढाल	-	मई (प्रथम पक्ष), २००४
६८. मुनि तीर्थ दर्शन	-	मई (द्वितीय पक्ष), २००४
६९. परमेष्ठी नमस्कार मंत्र	-	जून (प्रथम पक्ष), २००४
७०. चत्तारि मंगलोत्तम पाठ	-	जून (द्वितीय पक्ष), २००४
७१. धार्मिक पत्रकारिता का सार्थक स्वरूप	-	जुलाई (द्वितीय पक्ष), २००४
७२. समाज सुधार में धर्म गुरुओं की भूमिका	-	सितम्बर (संयुक्तांक), २००४
७३. मंगलं पुष्पदन्ताद्यो	-	नवम्बर (प्रथम पक्ष), २००४
७४. कुण्डगामंपुरम्	-	जनवरी (द्वितीय पक्ष), २००५

साहित्य सत्कार

(१) **व्यवहारसूक्ति** : लेखक पं. काशीनाथ गोपाल गोरे; प्र.-श्रीमती वीणा गोरे, ई-५१, महानगर विस्तार, लखनऊ-२२६००६; २००५ ई.; पृ.-८+२००; मूल्य रु. १००/-

श्री काशीनाथ गोपाल गोरे (ज. १६३६) ने अपने जीवन के विविध अनुभवों और अनुभूतियों तथा विशद सामान्य ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में जिन व्यावहारिक शिक्षाओं को ग्रहण किया, उनको सारांश में इन सूक्तियों में प्रस्तुत किया है। समस्त सूक्तियां ३६ प्रकरणों में प्रस्तुत हैं। आदर्श से प्रारम्भ होकर सुसंस्कार पर इनका समापन होता है। इन सूक्तियों में मानव स्वभाव की बहुत-सी दुर्बलताओं से सावधान रहने की शिक्षा भी मिलती है और व्यावहारिक जीवन में अपने को संयम रखने का उपाय भी दृष्टिगोचर होता है, जैसे कि-

कर्ज हमेशा खतरनाक होता उससे बचना तुम हरदम।
वरना कर्ज चुकाते रह जाओगे जीवन में हरदम।।
और
मित्र उधार मांगता हो जब कई बार तुम सोचो।
कहीं तुम्हारा धन जाये ही, मित्र शत्रु हो, सोचो।।

(२) **रोचक हास्य संस्मरण** : सम्पादक-सविता, अंशुमाली, कमलेश, श्याम, अधीर और कृष्णा अवस्थी; प्र.-प्रतिष्ठा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था, कविता कुंज, ई-४०१३/२६, सेक्टर-१२, राजाजीपुरम, लखनऊ; २००५ ई.; पृ.-८+१३०; मूल्य रु. ७५/-

५८ हास्य-व्यंग्य लेखकों की अनुभूतिजन्य रचनाएं इसमें संकलित हैं। अधिकांश लेखक लखनऊ नगर के हैं। सभी रचनाकारों का संक्षिप्त परिचय और उनके एकाधिक हास्यपूर्ण संस्मरण इसमें निहित हैं। **शोधादर्श** के सम्पादक श्री रमा कान्त जैन के भी २ संस्मरण इसमें हैं। लखनऊ के लगभग ४०० वर्तमान साहित्यकारों के नाम और पते भी इसमें परिशिष्ट रूप में संकलित किये गये हैं, जो साहित्य-रसिकों के लिए उपयोगी हैं।

(३) **जय जगत की चर्चा-अर्चा** : प्रस्तुति- डॉ. सुमन प्रकाश जैन; प्र.- जय जगत सेवा संस्थान, बी ३८/४८१, तुलसीपुर, वाराणसी-२२१०१०; २०० ई.; पृ.-१५२; मूल्य रु. १५०/-

गांधीवादी विचारधारा के संवाहक विचारनिष्ठ लेखक और कुशल सम्पादक आचार्य शरद कुमार 'साधक' के बहुआयामी व्यक्तित्व और उनकी वैचारिक सोच को इस कृति में उनकी पुत्रवधु डॉ. सुमन जैन द्वारा प्रस्तुत किया गया है। साधक जी विनोबा भावे के सर्वोदय और जय जगत के एक निष्ठावान प्रचारक रहे हैं। इस पुस्तक से उनके विषय में व्यक्तिगत और वैचारिक जानकारी सुलभ है।

(४) **सभी धर्म प्रभु के चरण :** लेखक- विनोबा, हिन्दी रूपान्तरण-जमनालाल जैन; प्र.- सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-२२१००१; २००५ ई., पृ.-६६; मूल्य रु. २५/-

आचार्य विनोबा भावे के धर्म-अध्यात्म विषयक तथा प्रायः सभी धर्मों की विशेषताओं के विषय में उनके विचारों का संक्षेप में संकलन इस पुस्तक में किया गया है। इसको पढ़ने से विनोबा जी के विचार जानने का साधन बना, परन्तु उनके सम्बन्ध में रही धर्म-निरपेक्षता की छवि और धर्म विषयक उदार दृष्टिकोण की छवि को आघात पहुंचा। संक्षेप में विनोबा जी के विचार जानने के लिए यह पुस्तक सुबोध है।

(5) The Jaina Sources of the History of Ancient India : By Dr. Jyoti Prasad Jain; Pub. Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd., 54 Rani Jhansi Road, New Delhi 110055; 2nd ed. 2005; PP xvii + 222; Price Rs. 425/-

This book presents a brief survey of the more important of the Jaina sources of the history of Ancient India (c. 100 BC - AD 900), particularly literary ones, and a discussion of certain fundamental problems in the chronology of ancient Indian history such as the dates of Mahavira era and of the beginning of the Earlier Saka, Vikrama and Saka eras, as well as the dates of important Jain authors and their works during the said millennium. The Sarasvati Movement, that is, the movement for the redaction of canonical literature among the Jains, has been duly highlighted. The study is presented in 12 chapters, supplemented by 3 appendices bearing on the dynastic chronology (Mahavira's Nirvana to M E 1000), pontifical genealogy of Mahavira's successors and chronology (100 BC - AD 900), besides an exhaustive bibliography and index.

It is the magnum opus of Dr. Jain's contribution to historiography. It was first published in 1964 and had been unavailable for the last 2 decades. The Jyoti Prasad Jain Trust got it republished the instant edition by M/s Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd.. The scholarly world is grateful to the publishers for making this valuable work available.

(6) Nandanavana (Elysium) : by Dr. N. L. Jain; Pub.- Parshwanath Vidyapeeth, I.T.I. Road, Karaundi, Varanasi - 221005 and Jain Center, Rewa - 486001; 2005; Pages xvii + 570; Price Rs. 500/-

The instant volume has two sections, one in English and the other in Hindi. The English section contains 20 papers of Dr. Nanda Lal Jain : 8 papers deal with principles of Jainism, 8 papers relate to different sciences in Jaina texts, 2 represent miscellany, one is biographical and one is autobiographical. The Hindi section contains 23 papers : 4 relate to researches in Jaina works, 7 deal with Jaina religion and philosophy, 4 deal with Jainism in relation to science, 2 relate to the problems of translation, 3 deal with propagation of Jainism in foreign lands, one is the review of Harivamsa Purana, one is a travelogue and the last one is extracts from diary. Besides, there are 5 appendices which bear on the personality and works of Dr. N. L. Jain.

The collection of papers in this volume as well as the biodata and bibliography of the author are of much interest for the scholars of Jainism as they give useful information on some important aspects of Jainology. The compendium has been edited by Dr. S. C. Lahri and Dr. Shriprakash Pandey. The editors and the publishers deserve compliment for bringing out this volume.

(7) Chapters on Passions (English Translation of Kasaya-Pahuda of Acarya Gunadhara) : by Dr. N. L. Jain; pub. Sri Bharatavarsiya Digambara Jaina (DS) Mahasabha, Lucknow - 226004 and Parswanatha Vidyapeeth, Varanasi, 221005; 2005; Pages xii + 342; Price Rs. 300/-

The Kasaya-Pahuda is a text of Karma theory, specially the Mohaniya Karma. It is attributed to Acharya Gunadhara who is assigned to second century AD. The introduction running into 38 pages is of particular relevance to the students of ancient scriptures. The Prakrit text is followed by Sanskrit version and English translation. The translation is supplemented by explanatory notes. Glossary given in appendix 2 is a valuable addition to the study. The translator Dr. N. L. Jain deserves congratulations for making this obtruse text comprehensible to general readers.

- Dr. Shashi Kant

(८) जीव समास का ज्ञान क्यों आवश्यक है ? : लेखक पं. किशन चन्द जैन 'भाई साहब', सम्पादक श्री महावीर प्रसाद जैन 'स्वतन्त्रता सेनानी'; प्र. श्री दिगम्बर जैन साहित्य प्रकाशन समिति, ३३२ स्कीम नं. १०, अलवर (राज.); २००४; पृ. २१८ ; मूल्य रु.४०/-

प्रस्तुत कृति में 'जीव समास क्या है' और 'उसका ज्ञान क्यों आवश्यक है?' जैसे गूढ़ विषय को २४ अध्यायों में, प्राचीन ग्रन्थों से यथावश्यक सन्दर्भ ग्रहण करते हुए, प्रतिपादित किया गया है। विद्वान लेखक के मतानुसार भव्य जीवों को मोक्षमार्ग रूप

चारित्र तथा दयामयी धर्म के वास्तविक पालन हेतु जीव समास के भेदों का ज्ञान होना आवश्यक है। यद्यपि पुस्तक प्रणयन में काफी परिश्रम हुआ है सामान्य पाठकों के लिये विषय दुरुह ही बना रहा है। तत्वज्ञ और इस गूढ़ विषय में रुचि रखने वालों के लिये पुस्तक उपयोगी होगी।

(६) **नियमसार स्याद्वाद चन्द्रिका एक अनुशीलन** : लेखक पं. शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी; प्र. दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ)-२५०४०४; २००५; पृ. २४६ ; मूल्य रु.६०/-

प्रथम शती ईस्वी के पूर्वार्द्ध में हुए आचार्य कुन्दकुन्द के ग्रन्थ **नियमसार** पर गणिनी आर्यिका ज्ञानमती जी द्वारा संस्कृत में रचित **'स्याद्वाद चन्द्रिका'** टीका और उनके द्वारा स्वयं कृत हिन्दी अनुवाद का उक्त ग्रन्थ पर पूर्व रचित टीकाओं से तुलनात्मक अध्ययन तद्विषयक अन्य ग्रन्थों के सापेक्ष करके विद्वान लेखक पं. शिवचरनलाल जी ने प्रस्तुत कृति में एक अच्छे शोध-प्रबन्ध का प्रणयन किया है। आगम ज्ञाता पंडित जी का उक्त ग्रन्थ और उस पर आर्यिका श्री द्वारा रचित टीका का यह अनुशीलन **नियमसार** और **स्याद्वाद चन्द्रिका** के अध्येता जिज्ञासुओं को इन्हें समझने में सहायक होगा। पंडित जी इस श्रम-साध्य अनुशीलन के लिये साधुवाद के पात्र हैं।

(१०) **नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं** : सम्पादक- डॉ. धर्म चन्द जैन, जोधपुर; प्र. अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर एवं ऑल इण्डिया जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ पारमार्थिक ट्रस्ट, १०, साजन नगर (चितावद), इन्दौर- ४५२००१; २००३; पृ. ८८८ ; मूल्य रु.२५०/-

पाँच खण्डों में समाहित इस विशालकाय ग्रन्थ में स्थानकवासी रत्नवंश सम्प्रदाय के सप्तम पट्टधर अध्यात्मयोगी, युगमनीषी विरुदों से ख्यात आचार्यप्रवर हस्तिमल म. सा. का जीवन-चरित, दर्शन, व्यक्तित्व और कृतित्व संजोया गया है। १३ जनवरी, १९११ ई. को राजस्थान में जोधपुर जिले के पीपाड़सिटी में ओसवाल वंशीय श्रावक केवलचन्द जी बोहरा एवं श्रीमती रूपादेवी (बाद में सती रूपकंवर जी) की सन्तति के रूप में जन्मे हस्तिमल जी ने २१ अप्रैल, १९९१ ई. को निमाज में १३ दिवसीय तप संथारे के साथ देह त्याग कर ८० वर्ष ३ माह ८ दिन का यशस्वी जीवन व्यतीत किया था। जन्म के कुछ माह पूर्व ही प्लेग के कारण पिता की मृत्यु हो जाने, छह वर्ष की अवस्था में ननिहाली सब स्वजन प्लेग की भेंट चढ़ जाने और तदनन्तर कुछ समय पश्चात ही स्नेहमयी दादी के भी काल कवलित हो जाने से खिन्न बालक हस्तिमल

के मन में अपनी माँ रूपादेवी के साथ-साथ वैराग्य के भाव उदित हुए जो बाबा हरखचन्द म.सा. का सुयोग पाकर पल्लवित होते गये। मात्र १० वर्ष २८ दिन की वय में उन्होंने आचार्य शोभा चन्द्र म. सा. से दीक्षा ग्रहण की थी और अपनी कुशाग्रबुद्धि, प्रतिभा व संयम-साधना के आधार पर मात्र १९ वर्ष ३ माह १९ दिन की अल्पवय में वह सप्तम पट्टधर के पद पर आरूढ़ कर दिये गये थे। इस प्रकार उन्हें ६१ वर्ष तक अपनी आम्नाय के चतुर्विध संघ पर एकच्छत्र राज्य करने का सुयोग प्राप्त रहा था। आचार्यपद के अपने दायित्व का उन्होंने बखूबी निर्वहन किया।

कुशल प्रवचनकार एवं प्रभावक आचार्य की लेखनी को विविध विषयक अगणित कृतियां प्रसूत करने का श्रेय है। वह बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हें 'पुरिसवरगंधहत्थीणं' सार्थक नाम दिया गया। यह महाकाय ग्रन्थ आचार्यश्री की गरिमा के अनुरूप उन्हें समर्पित श्रद्धांजलि है। इसके श्रमसाध्य कुशल संयोजन व सम्पादन के लिये भाई डॉ. धर्मचन्द जी तथा भव्य प्रकाशन के लिये प्रकाशक द्वय साधुवाद के पात्र हैं। यह ग्रन्थ हमें श्री नवरतन डागा, महामंत्री, अ. भा. जैनरत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के सौजन्य से प्राप्त हुआ है जिसके लिये हम उनके आभारी हैं।

(११) अध्यात्म और प्राण-ऊर्जा : प्रस्तुतकर्ता एवं प्रकाशक श्री लखपतेन्द्र देव जैन, सी-५७ ख, मन्दिर पार्क, महानगर विस्तार, लखनऊ-२२६००६; मार्च २००५; पृ. १०६०

त्यागी-व्रतियों की वैयावृत्य, प्राण ऊर्जा द्वारा स्व-पर रोग निवारण द्वारा जनकल्याण तथा अध्यात्म के क्षेत्र में पंच परमेष्ठी आदि के ध्यान द्वारा आत्मोन्नति इन तीन सद्उद्देश्यों से सेवानिवृत्त सदस्य अभियन्ता उ.प्र. राज्य विद्युत परिषद श्री लखपतेन्द्र देव जैन द्वारा प्रणीत यह विशालकाय ग्रन्थ ६ भागों में विभाजित है। प्रथम भाग में २५८ पृष्ठों में अध्यात्म की चर्चा है। द्वितीय भाग के ७६ पृष्ठ मानव शरीर विज्ञान को समर्पित हैं। बयालीस पृष्ठीय तृतीय भाग शरीर की रक्षा के सम्बन्ध में है। चतुर्थ भाग में ७२ पृष्ठों में प्राण ऊर्जा विज्ञान की विवेचना की गई है। ५६८ पृष्ठों में समाहित पंचम भाग में प्राण ऊर्जा के उपयोग पर प्रकाश डाला गया है और अन्तिम भाग ६ में १५ पृष्ठों में अध्यात्म और प्राण-ऊर्जा का परस्पर सम्बन्ध समझाया गया है। एक दुरुह किन्तु उपयोगी विषयवस्तु को सामान्य जन के लिये, उपर्युल्लिखित सद्उद्देश्यों से, सरल करने हेतु किये गये इस श्रमसाध्य कार्य के लिये इसके प्रस्तोता भाई लखपतेन्द्र देव जी साधुवाद के पात्र हैं।

(१२) **पं. कस्तूरचन्द्र जैन शास्त्री स्मृति ग्रंथ** : सम्पादक श्री अशोक कुमार जैन; प्र. पं. कस्तूरचन्द्र शास्त्री स्मृति ग्रंथ प्रकाशन समिति, पुष्पराज कालोनी (गली नं. ६), सतना-४८५००१; २००१; पृ. १६४

पुरानी भोपाल स्टेट में जिला रायसेन के ग्राम नरवर खड़ेरा में श्री सोहनलाल जैन एवं श्रीमती बेटी बाई के पुत्र रूप में सन् १६०० ई. में जन्मे और अक्टूबर १९६६ ई. में जबलपुर में दिवंगत हुए पं. कस्तूरचन्द्र शास्त्री, जिन्हें ईसरी बाजार (जिला गिरीडीह) के श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन उच्च विद्यालय की स्थापना, सुसंचालन और उन्नति का श्रेय है, की जन्म शती पर उनकी स्मृति को समर्पित है प्रस्तुत ग्रन्थ। इसमें आदरणीय पंडितजी के जीवन परिचय के साथ-साथ उनकी शिष्य मण्डली और उनसे प्रभावित उनके इष्ट मित्रों के संस्मरण, श्रद्धा-सुमन एवं शुभ-संदेश समाहित हैं। साथ ही अन्य ज्ञानवर्धक लेखों एवं रचनाओं ने ग्रन्थ की उपयोगिता में चार चाँद लगाये हैं।

(१३) **खेल-खिलौने** : रचनाकार डॉ. परमानन्द जड़िया; प्र. मधुलिका प्रकाशन, १८६/५१, खत्री टोला, मशकगंज, लखनऊ- १८; २००४; पृ. ४८ ; मूल्य रु.५०/-

साहित्य की सभी विधाओं में लेखनी चलाने में दक्ष डॉ. परमानन्द जड़िया की ४० बालोपयोगी रचनाओं का सचित्र यह संकलन बच्चों को भायेगा यह निस्सन्देह है। प्रत्येक रचना के लिये उपयुक्त चित्र-सज्जा कम्प्यूटर पर उनके पौत्र चि. राहुल द्वारा की गई है जिसके लिये वह बधाई का पात्र है।

- रमा कान्त जैन

अभिनन्दन

श्री दिलीप धींग, साहित्यकार एवं कवि उदयपुर, को उनके शोध-प्रबन्ध **'प्रमुख जैन आगमों में प्रतिपादित आर्थिक चिन्तन का समीक्षात्मक अध्ययन'** पर मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय द्वारा **विद्यावाचस्पति** की उपाधि प्रदान की गई।

श्रीमती मनोरमा जैन को उनके शोध-प्रबन्ध **'आचार्य जिनसेन कृत आदिपुराण में प्रतिपादित संस्कारों का समीक्षात्मक अध्ययन'** पर राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, दिल्ली, द्वारा **विद्यावारिधि** (पी-एच.डी.) की उपाधि प्रदान की गई।

उपाध्याय श्री गुप्तिसागर जी को राष्ट्र उत्थान, संस्कार संवर्द्धन एवं लोक कल्याण हेतु किये गये रचनात्मक कार्यों के लिये गढ़वाल विश्वविद्यालय द्वारा १६ अक्तूबर को **डी. लिट. की मानद् उपाधि** प्रदान की गई।

२ अगस्त, २००५ ई. को नई दिल्ली में राष्ट्रपति डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम ने जैन **आचार्य श्री महाप्रज्ञजी** को **'सद्भावना पुरस्कार'** से सम्मानित किया।

७ अगस्त को जयपुर में भारत जैन महामण्डल द्वारा **डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर** को **'विद्यावारिधि'** की उपाधि से सम्मानित किया गया।

५ अक्तूबर को लखनऊ में जैन विद्या शोध संस्थान एवं जैन मिलन, लखनऊ के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित विश्व मैत्री दिवस पर **डॉ. अनुपम जैन**, इन्दौर, को **'विश्व मैत्री सेवा सम्मान वर्ष २००५'** से सम्मानित किया गया।

९ अक्टूबर को कुन्दकुन्द भारती नई दिल्ली में अध्यात्म रत्नाकर **पं. रतनचंद्र भारिल्ल, जयपुर** को **'आचार्य अमृतचन्द्र पुरस्कार'** से सम्मानित किया गया।

१७ अक्तूबर को 'तीर्थंकर वाणी' के प्रधान संपादक **डॉ. शेखरचन्द्र जैन, अहमदाबाद** को **गणिनी आ. ज्ञानमती पुरस्कार २००५** से पुरस्कृत किया गया।

श्री दामोदर जैन, टीकमगढ़ को राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT) की साधारण सभा का सदस्य नामांकित किया गया।

२९ अक्तूबर को लखनऊ में धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में **डॉ. पूर्ण चन्द्र जैन**, अवकाश प्राप्त प्रधानाचार्य, राजकीय आयुर्वेदिक कालेज, लखनऊ को सम्मानित किया गया।

उपर्युक्त सभी सम्मानित महानुभावों का उनकी उपलब्धियों के लिये शोधादर्श परिवार हार्दिक अभिनन्दन करता है और उन्हें अपनी शुभकामना अर्पित करता है।

शोक संवेदन

३१ मई, २००५ को महाराष्ट्र प्रदेश के पुलिस विभाग में कार्यरत ३८ वर्षीय **श्री किरण दीगांबरराव घोपाड़े** (नागपुर निवासी सैतवाल जैन) गोंदिया जिले के अति दुर्गम स्थल पर अपना कर्त्तव्य निभाते हुये और नक्सलवादी हमले में आखिरी दम तक लड़ते हुये शहीद हो गये।

माह जुलाई में हाईकोर्ट जस्टिस एवं पूर्व राज्यसभा सदस्य तथा प्रबुद्ध चिन्तक **श्री गुमानमल लोढ़ा** का निधन हो गया।

१३ अगस्त को लखनऊ में 'शोधादर्श' के लेखक एवं सुधी पाठक, प्रबुद्ध चिन्तक ८७ वर्षीय **डॉ. अमरपाल सिंह**, वयोवृद्ध पत्रकार एवं अवकाश प्राप्त उपनिदेशक, भारत सरकार, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, दीर्घ अस्वस्थता के उपरान्त हमसे मुँह मोड़कर चले गये।

६ सितम्बर को लखनऊ में 'सत्यार्थ' पत्र के सम्पादक वयोवृद्ध धर्मनिष्ठ विद्वान रचनाकार **पं. कैलाशचंद्र जैन पंचरत्न** नहीं रहे।

१० सितम्बर को नसीराबाद में १०६ वर्षीय आर. के. मार्बल परिवार के पितामह 'भामाशाह' विरुद से ख्यात **बाबा रतनलाल पाटनी** का स्वर्गवास हो गया।

१५ सितम्बर को दिल्ली में ६५ वर्षीय सुश्रावक, सुचिन्तक, सुलेखक, शोधादर्श के प्रशंसक **श्री सुखमालचन्द्र जैन** हमें छोड़कर चले गये।

१ अक्तूबर को आगरा में ७० वर्षीय साहित्य मनीषी **श्री श्रीचन्द सुराणा नहीं** रहे।

११ अक्तूबर को अहमदाबाद में वयोवृद्ध मूर्धन्य विद्वान, श्री अ. भा. दिग. जैन विद्वत्परिषद के भू.पू. अध्यक्ष नीमच निवासी **डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन शास्त्री** का निधन हो गया।

शोधादर्श परिवार उपर्युक्त दिवंगत महानुभावों को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है, उनकी आत्मा की चिर शान्ति और सद्गति के लिये जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करता है तथा शोक सन्तप्त उनके स्वजनों-परिजनों के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

आभार

श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, १३६/२, जागृति विहार, मेरठ- २५०००१ ने अपने पौत्र चि. ईशु जैन के जन्मदिन के उपलक्ष में **शोधादर्श** को रु. २५१/- भेंट स्वरूप प्रदान किये।

डॉ. (श्रीमती) संतोष जैन, १७२०६ Gerritt Ave., Cerritos (U.S.A.) ने अपने पूज्य पिताजी स्व. श्री अजित प्रसाद जैन की पुण्य स्मृति में **शोधादर्श** को रु. २,०००/- भेंट किये।

पाठकों के पत्र

शोधादर्श-५६ को आद्योपान्त अवलोकित कर इसके प्रकाशनोत्कर्ष पर हर्ष हुआ। गुरुगुणकीर्तन में 'महात्मा भगवानदीन' का चारु जीवन चरित परम प्रेरणा प्रदायक है। 'चमत्कार की जयजयकार' में स्व. प्रधान सम्पादक की व्यावहारिक सूक्ष्म दृष्टि हमारे संकुचित विचारों और आडम्बर पूर्ण भावनाओं को दूर कर सद्धर्म चिन्तन के लिए प्रेरित करती है। 'खारवेल', 'एक विचित्र जैन प्रस्तरांकन', 'कंकाली टीला', 'परिवेश', 'कुवलयमाला कहा', सामयिक परिदृश्य-क्षणिकाएं आदि रम्य रचनाएं रसिक पाठकों को प्रभावित और आवर्जित करने में सर्वथा समर्थ हैं।

-डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी, पूर्व प्राचार्य, अजीतमल (औरैया)

शोधादर्श-५६ में महात्मा भगवानदीन जी पर लेख बहुत सारगर्भित है।

-पं. तारा चन्द्र प्रेमी, फिरोजपुर झिरखा

शोधादर्श-५६, जुलाई, अंक में गुरुगुण-कीर्तन के अन्तर्गत महात्मा भगवानदीन जी के व्यक्तित्व/कृतित्व के विषय में विस्तार से जानकारी मिली।

-श्री ब्रह्मराज मित्तल, पूर्व प्राचार्य हांसी

शोधादर्श-५६ मेरे हाथों में है। खारवेल विषयक आपका शोध अत्यन्त मौलिक एवं प्रामाणिक है। आपने पृष्ठ १४-१५ पर जो समीक्षाएं की हैं वे भ्रम को मिटाने वाली हैं। डॉ. प्रद्युम्न कुमार जी का आलेख दिगम्बरत्व की मर्यादा पर करारी चोट है परन्तु जैनियों को आगम में संशोधन मान्य नहीं है- इसे सर्वज्ञ की वाणी माना जाता है। जमनालाल जी वृद्धावस्था में भी छक्के चौके लगाते हैं और बेधड़क हैं। चिंतन कण चिंतन को झकझोरते हैं। रमा कांत जी की क्षणिकाएं क्षण-क्षण रिझाती हैं। कुवलयमाला कहा की समीक्षा में संक्षिप्तता के कारण अनेक बिन्दु छूट गए हैं।

- डॉ. अभय प्रकाश जैन, ग्वालियर

शोधादर्श पत्रिका निरंतर प्राप्त हो रही है। उसका प्रत्येक अंक जैन पुरातत्व के खोजपूर्ण तथ्यों एवं विशिष्ट लेखों से परिपूर्ण रहता है।

- श्री डालचंद जैन, सागर

शोधादर्श-५६ आते ही पूरी पढ़ डाली। विभिन्न पत्रिकाओं में शोधादर्श अद्वितीय है। 'यथानाम तथा गुणाः' को चरितार्थ करने वाली इस पत्रिका में धर्म, दर्शन, इतिहास, पुरातत्व, राजनीति, सामाजिक सरोकार, आहार-विहार, साहित्य-सृजन आदि-आदि

विषयों पर रोचक, शोधपरक और चिन्तन-प्रेरक सामग्री रहती है। सादगी तो इस पत्रिका की पहचान है। किन्तु इसके आभ्यन्तर में संजोये गए ज्ञान के अक्षय कण इसकी अपार सम्पदा हैं।

शोधादर्श-५६ की सभी रचनाएं बोधगम्य, ज्ञानवर्द्धक तो हैं ही, चिन्तनपरक भी हैं। सम्पादकीय और समाचार-दर्शन जैन धर्मानुयाइयों को सावधान करता है और उन्हें सन्मार्ग भी सुझाता है। दिगम्बरत्व और नग्नत्व पर प्रस्तुत विचार सामयिक हैं। शाकाहार पर विस्तृत विवेचन महत्वपूर्ण है। नवकार मंत्र पर व्यक्त विचार सारवान और अनुकरणीय हैं। जाते-जाते भी प्रधान सम्पादक स्व. अजित प्रसाद जैन 'चमत्कार की जयजयकार' के व्यंग्योपदेश से जैन समाज के साधु से लेकर श्रावक तक सभी को दिखावटी कर्मकाण्डी धर्म से सचेत कर गए। 'विचित्र जैन प्रस्तरांकन', 'विदेशी जैन भक्त ओखारिका' तथा 'कंकाली' पर प्रस्तुत सामग्री इतिहास एवं पुरातत्त्व की महत्वपूर्ण जानकारी देती है । खारवेल के अभिलेख का मूल पाठ और उसका हिन्दी रूपान्तरण संग्रहणीय है। 'गुरुगुण-कीर्तन' तथा 'कुवलयमाला कहा' जैन महात्मा और जैन वाङ्मय से परिचित कराने वाली उल्लेखनीय रचनाएं हैं। 'परिवेश' के प्रथम छन्द ने प्रभावित किया।

- डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव, लखनऊ

अंक छप्पनवां 'शोधादर्श'। प्राप्त कर छाया उर में हर्ष।।
काव्य 'रस्तोगी' का गुण सार। 'पहले आप', सौख्य आगार।।
'डॉक्टर जड़िया' का 'परिवेश', हास्य संग करता नीति-निदेश।।
विरच कर क्षणिकायें 'श्री जैन'। व्यंग्य द्वारा करते बेचैन।।
'शाकाहार जीवन्त आहार'। लेख जन-जन हित सौख्यागार।।
गये हैं 'अजित प्रसाद' गोलोक। 'अबोध'-उर को देकर के शोक।।
प्राप्त कर उनकी आत्मा शान्ति। स्वर्ग में करे सदा विश्रान्ति।।

- श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', लखनऊ

शोधादर्श-५६ में गुरुगुणकीर्तन के अन्तर्गत महात्मा भगवानदीन जी के बारे में विस्तृत जानकारी कुशलता के साथ दी गई है, ध्यान देने योग्य है।

श्री अजित प्रसाद जैन का सम्पादकीय व पत्रिका के अंत में श्री अजित प्रसाद जी जैन शीर्षक से दिए गए शब्द आकर्षक हैं। निश्चय ही वे बड़े जीवट के व्यक्ति थे। उन्हें मेरी हार्दिक श्रद्धांजलि।

खारवेल अच्छा शोधपूर्ण लेख है। 'नग्नत्व और मूलगुण-एक चिन्तन' गंभीरता से विचारणीय है। 'शाकाहार- एक जीवन्त आहार' आधुनिक युग की महती आवश्यकता है तथा 'परमेष्ठी नवकार मंत्र' संक्षिप्त होते हुए भी सारगर्भित है।

जस्टिस जैन की रचना 'उपालंभ देवानंदा' का तथा 'मैं कहता हूँ आतमदेखी' गंभीरता से सोचने, विचारने को बाध्य करता है।

'कुवलयमाला कहा'- एक नवीन ग्रंथ से परिचय कराना सुखद है। समाचार विमर्श, समाचार विविधा के अन्तर्गत दी गई जानकारी ज्ञानवर्द्धन हेतु उपयुक्त है। साहित्य सत्कार नए ग्रंथों की जानकारी संक्षेप में अच्छी तरह देता है। उन्हें देखने की ललक जगाता है। अन्य सामग्री पठनीय है।

- श्री मदनमोहन वर्मा, ग्वालियर

शोधादर्श-५६ में प्रस्तुत 'इस्लाम और पशुवध' की झलकियों को कुरान का समर्थन प्राप्त नहीं है। कुरान पशुवध का निषेध नहीं करता; सम्प्रति वह खाये जाने योग्य तथा न खाये जाने योग्य पशुओं का वर्गीकरण अवश्य करता है।

आपकी 'क्षणिकाएं' केवल क्षण मात्र के लिये नहीं हैं, चिन्तन के लिये हैं।

-श्री आदित्य जैन, कानपुर

आपके **शोधादर्श** से मैं अत्यन्त प्रभावित हूँ। बड़ी रुचि से एक बार नहीं, दो-दो बार और कोई-कोई लेख तो तीन-तीन बार भी पढ़ लेता हूँ।

- श्री जगाती नर्मदा प्रसाद, सागर

शोधादर्श-५६ आद्योपान्त पढ़ा। खट्टी-मीठी, कड़वी- कसैली, चरपरी सभी तरह की सामग्री से भरपूर है यह अंक। 'गुरुगुण-कीर्तन' में भाई रमा कान्त जी ने महारथी पुरुष महात्मा भगवानदीन का जीवन दर्शाया । उनसे मेरा लगभग ५० वर्ष पूर्व दिल्ली में परिचय रहा। वह मेरे पड़ोस में अपने भांजे जैनेन्द्रकुमारजी से मिलने आते थे। भाई साहब का अन्तिम सम्पादकीय शिथिलाचार पर करारी चोट है। 'खारवेल' विषयक आलेख हेतु खोजी भाई डॉ. शशि कान्त को ढेर सारी शुभकामनायें। मैंने भी उदयगिरि-खण्डगिरि की यात्रा की है। सन्त ॐ पारदर्शी ने जहाँ अपनी कुण्डलियों में शिथिलाचारी की धज्जियां उड़ा दी, वहीं डॉ. जड़िया ने 'परिवेश' के अन्तर्गत रत्न जड़े हैं, वर्तमान सामाजिक विसंगतियों पर करारे तमाचे जड़े हैं। 'कुवलयमाला कहा' के परिचय से अपनी पुरानी विरासत का पता चलता है।

- श्री महावीर प्रसाद जैन सर्राफ, दिल्ली

श्री अजित प्रसाद जैन

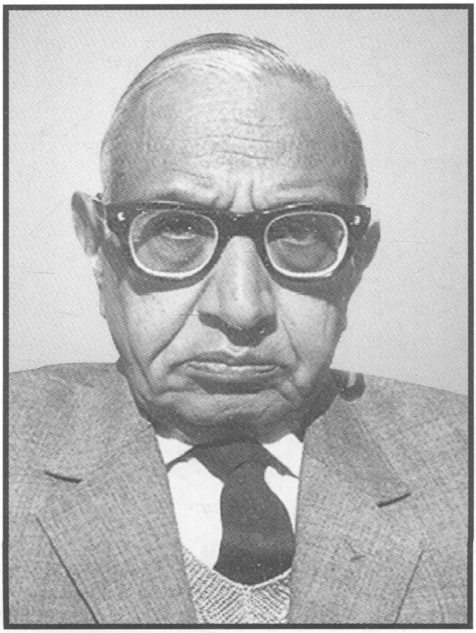

जन्म	महाप्रयाण
१ जनवरी, १९१८ ई.	२५ जून, २००५ ई.

आवश्यक सूचना

इस वर्ष का वार्षिक शुल्क ५० रु. (पचास रुपये), यदि अभी नहीं भेजा हो, तो कृपया मनीआर्डर द्वारा 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र. , ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४', को शीघ्र ही भेजने का अनुग्रह करें। चेक लखनऊ के ही स्वीकार होंगे। एक प्रति का मूल्य २० रु. (बीस रुपये) है। मनीआर्डर भेजने पर उसकी सूचना एक पोस्ट कार्ड पर भी अपने पूरे नाम पते के साथ अवश्य भेजें।

शोधादर्श चातुर्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक मार्च, जुलाई व नवम्बर में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहिए। यथासंभव लेख ३–४ टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। *लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें। अप्रकाशित लेख–रचना लौटाना कठिन होगा।*

शोधादर्श में समीक्षार्थ पुस्तकों तथा पत्र–पत्रिकाओं की *दो प्रतियां* भेजी जायें।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु *शोधादर्श* का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४, के पते पर भेजे जायें।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के संबंध में लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों /न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुंचने की सूचना भी देवें।

– सम्पादक